शोधादर्श

६४

राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली, में संग्रहीत पल्लू, बीकानेर (राजस्थान) से प्राप्त
१२वीं शती ईस्वी की 77x46x22 से.मी. आकार की **जैन सरस्वती की मूर्ति**

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

वर्धमान महावीर स्वामी

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी

चैत्र सित त्रयोदशी
जन्मे प्रभु महावीर।
आये धरा पर
हरने जग की पीर।।१।।

सिद्धारथ-त्रिशला-नन्दन
बर्धमान अमित गुणधाम।
पादपद्मों में उनके
अर्पित कोटिक प्रणाम।।

आद्य सम्पादक : (स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
पूर्व प्रधान सम्पादक : (स्व.) श्री अजित प्रसाद जैन
सलाहकार : डॉ. शशि कान्त
सम्पादक : श्री रमा कान्त जैन
सह–सम्पादक : श्री नलिन कान्त जैन
श्री सन्दीप कान्त जैन
श्री अंशु जैन 'अमर'

प्रकाशक :
तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र.
ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ- २२६ ००४

णाणं णरस्स सारं- सच्चं लोयम्मि सारभूयं

शोधादर्श -६४

वीर निर्वाण संवत् २५३४ मार्च २००८ ई.

विषय क्रम

१.	गुरुगुण-कीर्तन : डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री ज्योतिषाचार्य	श्री रमा कान्त जैन	१
२.	सम्पादकीय : स्वागत योग्य निर्णय	श्री रमा कान्त जैन	७
३.	सरस्वती वन्दन		८
४.	मल्लिषेण प्रशस्ति	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	९
५.	पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं सादगी से	श्री अजित प्रसाद जैन	१४
६.	पद्य	कवि दौलतराम	१४
७.	जैन सन्देश शोधांक - एक पर्यालोचन	डॉ. शशि कान्त	१५
८.	कवि भागचन्द्र और उनका महावीराष्टक स्तोत्र :		३०
	महावीराष्टक स्तोत्र का हिन्दी पद्यानुवाद	श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'	३२
	जैनदर्शन के आलोक में 'महावीराष्टक स्तोत्रम्'	डॉ. विदुषी भारद्वाज	३४
९.	अपरिग्रह : अनुत्तरौपपातिक सूत्र के सन्दर्भ में	साध्वी प्रवीण कुमारी 'प्रीति'	३७
१०.	'अरिहन्त' अथवा 'अरहन्त' (एक चिन्तन)	श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'	४६
११.	क्रोध	श्रीमती इन्दु कान्त जैन	४८
१२.	भारत के उद्योग एवं विज्ञान जगत का एक जाज्वल्यमान नक्षत्र	श्री रमा कान्त जैन	४९
१३.	भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में सहारनपुर जनपद की जैन समाज का योगदान	श्री अमित जैन	५३

१४.	अमेरिका के जैन मन्दिर		६०
१५.	अमेरिका के संग्रहालयों में जैन कलाकृतियां		६०
१६.	समदर्शिता (संत तिरुवल्लुवर के कुरल का भावानुवाद)	डॉ. इंदरराज बैद	६३
१७.	आध्यात्मिक गीत	डॉ. महेन्द्र सागर प्रचंडिया	६४
१८.	सामयिक परिदृश्य : क्षणिकाएं	श्री रमा कान्त जैन	६५
१९.	पारदर्शी कुण्डलियाँ	श्री ऊँ पारदर्शी	६६
२०.	सोरठे	श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'	६६
२१.	साहित्य-सत्कार :		
	श्री चन्दनबाला शतक;		
	श्रुत-आराधक (जैन इतिहास के प्रेरक व्यक्तित्व, भाग ३);		
	जैन पाण्डुलिपियां एवं शिलालेख : एक परिशीलन	डॉ. शशि कान्त	६७
	जैन धर्म की श्रमणियों का बृहद् इतिहास;		
	जैन श्रमणी परम्परा : एक सर्वेक्षण; जैन धर्म जानिए,;		
	हम तो कबहुँ न निज घर आये;		
	प्राकृत एवं संस्कृत साहित्य में गुणस्थान की अवधारणा;		
	Historicity of 24 Jain Tirthankars;		
	विविध साहित्य -	श्री रमा कान्त जैन	६९
२२.	समाचार विविधा :		
	'इस्लाम और शाकाहार' पुस्तक का विमोचन;		७५
	भगवान ऋषभदेव द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी;		७५
	श्री अजित प्रसाद जैन का पुण्य स्मरण;		७६
	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन स्मृति गोष्ठी;		७६
	निवाई में दो दिवसीय अखिल भारतीय विद्वत् संगोष्ठी;		७७
	छत्तीसगढ़ में नहीं खुलेंगे कत्लखाने		७८
	भारतीय जैन मिलन का वार्षिक अधिवेशन;		७८
	डॉ. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य की जन्म जयन्ती		७८
२३.	अभिनन्दन		७९
२४.	शोक संवेदन		८३
२५.	आभार		८४
२६.	पाठकों के पत्र		८५
२७.	महावीर जयन्ती आई	श्री लूणकरण नाहर जैन	९१

गुरुगुण-कीर्तन

डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री ज्योतिषाचार्य

विलक्षण प्रतिभा के धनी, शिक्षक, लेखक, विद्वान।
कृतियों में अपनी दिया, सटीक अनुपम ज्ञान।।
जीवन में अपने रहे, लेखनी के कुबेर।
ज्योतिष में हुए प्रख्यात, यों छुए विषय ढ़ेर।।

संसार में कुछ व्यक्ति कम समय में ही काफी काम कर काफी नाम कमा ले जाते हैं। उन्हीं में गणना है डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री ज्योतिषाचार्य की भी। विविध विषयों पर ढेर सारी पोथियों का प्रणयन कर डालने वाले शास्त्री जी की छवि अपने मन-मस्तिष्क में एक लिखाड़-लेखनी कुबेर-की रही है। उनके सर्वप्रथम दर्शन का सौभाग्य मुझे २७ नवम्बर, १९५३ ई. को आरा में हुआ था। उन्नत ललाट, काले फ्रेम की ऐनक, बन्द गले का काला कोट धारण किये शास्त्री जी के मुख पर तेजस्विता विराजती थी। उन्होंने मेरे अग्रज शशि कान्त जी का पाणिग्रहण संस्कार पूर्ण जैन विधि विधान के साथ सोल्लास सम्पन्न कराया था। जैन सिद्धान्त भवन, आरा, की शोध पत्रिका **'जैन सिद्धान्त भास्कर'** के सम्पादन से जुड़े शास्त्री जी मेरे पिताजी डॉ. ज्योति प्रसाद जी के पत्र मित्र थे। अगस्त १९५८ ई. में जब पुनः आरा जाना हुआ शास्त्री जी के निवास पर उनसे भेंट करने का और उनका स्नेहभाजन होने का अवसर मुझे प्राप्त हुआ। तदनन्तर उनका लखनऊ हमारे आवास पर भी पिताजी से मिलने आना हुआ और उनके दर्शनों का लाभ हमें मिला। उनकी कई कृतियां पिताजी के पुस्तक संग्रह में संग्रहीत हैं।

यद्यपि विभिन्न पोथियों में अंकित उनके परिचय में सन् १९१२ ई. से लेकर सन् १९२२ ई. तक भिन्न-भिन्न जन्म तिथियां दी हुई हैं, **'तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा, खण्ड-१'** के प्रारम्भ में दिये गये कृतिकार के परिचय के अनुसार नेमिचन्द्र जी का जन्म विक्रम संवत् १९७२ की पौष कृष्ण १२ (तदनुसार रविवार, २ जनवरी, १९१६ ई.) को राजस्थान में बाबरपुर में हुआ था। बाबरपुर ग्राम राजस्थान के धौलपुर जिले में है। उनके पिताजी का नाम बलवीर सिंह और माताजी का श्रीमती जावित्री बाई था। उनका परिवार जैसवाल जातीय, पांडिया गोत्रीय दिगम्बर जैन धर्मानुयायी रहा। अपने माता-पिता की एकमात्र सन्तति नेमिचन्द्र के सिर पर से

पिता का साया मात्र डेढ़ वर्ष की आयु में ही उठ गया। अतः उनकी माताजी ने उनका लालन पालन अपने पितृगृह बसई ग्राम में किया। उनके नानाजी का नाम झण्डूलाल और मामाजी का घियाराम था। अतः शिक्षा का श्रीगणेश ग्राम बसई (जिला- धौलपुर) की प्राथमिक पाठशाला में हुआ। तदनन्तर राजाखेड़ा के माध्यमिक स्कूल से मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण की और वहीं कुन्दकुन्द विद्यालय में धार्मिक शिक्षा ग्रहण कर प्रवेशिका परीक्षा उत्तीर्ण की। प्रारम्भ से ही मेधावी और तीक्ष्णबुद्धि नेमिचन्द्र जी तत्पश्चात आगे अध्ययन हेतु स्याद्वाद विद्यालय, वाराणसी, गये और वहाँ सात वर्ष तक रह जैन धर्म, संस्कृत-प्राकृत भाषा-साहित्य, न्याय और ज्योतिष विषयों का अध्ययन किया। वहीं उन्होंने जैनधर्म शास्त्री परीक्षा तथा बंगाल संस्कृत एसोसिएशन, कोलकाता, की न्यायतीर्थ (दिगम्बर जैन) परीक्षा १९३७ ई. में, ज्योतिषतीर्थ परीक्षा १९३८ ई. में, काव्यतीर्थ परीक्षा १९३९ ई. में तथा यू.पी. बोर्ड इलाहाबाद की हाईस्कूल परीक्षा १९४० ई. में उत्तीर्ण की।

जुलाई १९४० ई. में आजीविका हेतु नेमिचन्द्र शास्त्री जी आरा जैन बाला-विश्राम में रु. ५०/- मासिक पर धर्माध्यापक के पद पर कार्य करने आ गये। कुछ समय पश्चात वहाँ प्रधानाध्यापक हो गये। इसके उपरान्त जैन सिद्धान्त भवन, आरा, में उन्होंने पुस्तकालय अध्यक्ष के रूप में सेवाएं दी। किन्तु ज्ञानार्जन की ललक और क्रम बना रहा। फलतः स्व अध्यवसायी (प्राइवेट) छात्र के रूप में सन् १९४१ ई. में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से ज्योतिष में शास्त्री परीक्षा, और सन् १९४६ ई. में उक्त विश्वविद्यालय से ज्योतिषाचार्य परीक्षा उत्तीर्ण की। यह क्रम यहीं नहीं रुका और स्व अध्यवसायी (प्राइवेट) छात्र के रूप में सन् १९५४ ई. में उन्होंने उत्तर प्रदेश बोर्ड इलाहाबाद से इण्टरमीडिएट परीक्षा, १९५६ ई. में हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, की साहित्यरत्न परीक्षा, १९५७ ई. में आगरा विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. परीक्षा, १९५८ ई. में बिहार विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. परीक्षा, १९५९ ई. में उक्त विश्वविद्यालय से प्राकृत में एम.ए. परीक्षा उत्तीर्ण की और उसमें स्वर्णपदक अर्जित किया। तदनन्तर १९६२ ई. में बिहार विश्वविद्यालय से शोध-प्रबन्ध **'हरिभद्र के प्राकृत कथा साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन'** पर पी-एच.डी. और १९६७ ई. में शोध-प्रबन्ध **'संस्कृत काव्य के विकास में जैन कवियों का योगदान'** पर मगध विश्वविद्यालय से डी. लिट्. उपाधि प्राप्त कर शिक्षा के शिखर पर आसीन हुए।

जैन सिद्धान्त भवन, आरा से प्रकाशित षाड्मासिक शोध पत्रिका **'जैन सिद्धान्त भास्कर'** और **'Jaina Antiquary'** के जुलाई १६४५ अंक से शास्त्री जी उसके सम्पादन मण्डल में जुड़े और दिसम्बर १६७३ तक उससे सम्बद्ध रहे। एम.ए. परीक्षाएं उत्तीर्ण करने के उपरान्त सन् १६५६ ई. में वह शासकीय संस्कृत विद्यालय सुल्तानगंज में ज्योतिष का अध्यापन करने गये। और कुछ ही समय उपरान्त ही वह आरा के हरप्रसाद दास जैन डिग्री कालेज के संस्कृत विभाग में नियुक्त हो गये। डॉ. नेमिचन्द्र जी उक्त कालेज में संस्कृत विभागाध्यक्ष के रूप में १० जनवरी, १६७४ ई. को असामयिक निधन होने तक सेवारत रहे।

कुशल शिक्षक डॉ. नेमिचन्द्र जी का व्यवहार अपने शिष्यों के प्रति मृदुल था। वह उन्हें आगे अध्ययन हेतु प्रोत्साहित करते थे। उनके मार्ग निर्देशन में एक दर्जन से अधिक शोध छात्रों ने शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत कर पी-एच.डी. उपाधि प्राप्त की। वह अपने सह अध्यापकों और छात्रों के परम हितैषी कल्पतरु समान थे।

सन् १६३७ ई. में उनका विवाह चिरंजीलाल जी की सुपुत्री सुशीला देवी से हुआ और सन् १६५४ ई. में उन्हें पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई जो डॉ. नलिन कुमार शास्त्री के नाम से विख्यात हैं।. अट्ठावन वर्ष की वय में अपनी असामयिक मृत्यु के समय वह अपने पीछे अपनी पत्नी और पुत्र को ही नहीं, अपितु अपनी माँ को भी रोता-बिलखता छोड़ गये।

विद्याव्यसनी, बहुभाषा विज्ञ, विविध विषयों में विचक्षण शास्त्री जी की खूबी यह रही कि जो विषय उन्होंने पढ़ा तुरन्त उस पर उनकी लेखनी दौड़ पड़ी। भाग्य से प्रकाशक भी उन्हें मिलते चले गये। परिणामतः विपुल मात्रा में साहित्य सृजन और उसके प्रकाशन में वह सफल रहे। उनके कृतित्व का लेखा जोखा निम्नवत है :

सर्वप्रथम सन् १६४१ ई. में **'मुहूर्त मार्तण्ड'** लिखकर जैन ज्योतिष ग्रन्थों की प्रतिष्ठा बढ़ाई। सन् १६५२ ई. में उन्होंने **'भारतीय ज्योतिष'** ग्रन्थ का प्रणयन किया जिस पर उन्हें उत्तर प्रदेश सरकार ने पुरस्कृत किया। भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित इस कृति की लोकप्रियता का अनुमान इस बात से सहज लगाया जा सकता है कि अक्टूबर २००२ ई. तक प्रकाशक ने उसके ३५ संस्करण प्रकाशित किये। सन् १६५६ ई. में **'हिन्दी-जैन-साहित्य परिशीलन'** का दो भागों में तथा **'मंगलमन्त्र णमोकार एक अनुचिन्तन'** का प्रणयन किया जो भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हुए। दूसरी कृति इतनी लोकप्रिय हुई कि उसके कई संस्करण निकले।

सन् १९६८ ई. में प्रणीत और श्री गणेश प्रसाद वर्णी ग्रन्थमाला से प्रकाशित **'आदिपुराण में प्रतिपादित भारत'** तथा तदनन्तर प्रणीत **'संस्कृत-गीतिकाव्यानुचिन्तनम्'** और **'संस्कृत काव्य के विकास में जैन कवियों का योगदान'** को भी उत्तर प्रदेश सरकार से पुरस्कृत होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। **'संस्कृतगीतिकाव्यानुचिन्तनम्'** पर उन्हें गंगानाथ झा पुरस्कार, श्रमण जैन भजन प्रचारक संघ पुरस्कार तथा अ. भा. दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् पुरस्कार भी प्राप्त हुए।

सन् १९७० ई. में उन्होंने प्राकृत भाषा में निबद्ध पुराने जैन आख्यानों का हिन्दी में नये कलेवर में ढालकर **'पुराने घाट : नयी सीढ़ियां'** नाम से प्रणयन किया और वह कृति दिल्ली के अहिंसा मंदिर प्रकाशन से प्रकाशित हुई।

उपर्युक्त के अतिरिक्त शास्त्री जी द्वारा प्रणीत मौलिक और प्रकाशित कृतियों का विवरण इस प्रकार है- संस्कृत साहित्य और व्याकरण के क्षेत्र में- **'महाकवि भास'** (मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी), **'संस्कृत-प्रबोध'** (सुशीला प्रकाशन धौलपुर), **'स्नातक-संस्कृत व्याकरण'** (ज्ञानदा प्रकाशन, पटना), **'चन्द्र-संस्कृत व्याकरण'** (मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी), **'हेमशब्दानुशासन : एक अध्ययन'** (व्याकरण शास्त्र का तुलनात्मक अध्ययन) (चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी) और **'संस्कृत-अनुवाद-रचना-प्रबोध'**; प्राकृत व्याकरण और साहित्य के क्षेत्र में- **'अभिनव प्राकृत व्याकरण'** (तारा यंत्रालय, वाराणसी), **'प्राकृत-भाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास'** (तारा यंत्रालय, वाराणसी), **'प्राकृत-प्रबोध'** (चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी), **'हरिभद्र के प्राकृत कथा साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन'** (प्राकृत शोध संस्थान, वैशाली); व्यक्तित्व सम्बन्धी- **'पण्डित गोपालदास वरैया : संक्षिप्त झांकी'** (अ.भा. दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद्), **'वाङ्मयाचार्य पं. जुगलकिशोर मुख्तार युगवीर : कृतित्व और व्यक्तित्व'** (अ. भा. दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद्); जैन धर्म विषयक- **'विश्व शांति और जैन धर्म'** (जैनेन्द्र भवन, आरा) और चार भागों में प्रणीत महाकाय ग्रन्थ **'तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा'** जिसका प्रकाशन उनकी मृत्यु के उपरान्त १३ नवम्बर, १९७४ ई. को अ. भा. दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् द्वारा संभव हुआ। अनेक पत्र-पत्रिकाओं को अपनी लेखनी से उपकृत करने वाले शास्त्री जी ने **'भाग्यफल'** नाम से एक उपन्यास का भी प्रणयन किया था जो प्रथमतः

दिल्ली से प्रकाशित साप्ताहिक **'वीर'** में धारावाहिक रूप में तदनन्तर पुस्तकाकार साहित्य-कुटीर, आरा, से प्रकाशित हुआ।

ऊपर उल्लिखित मौलिक कृतियों के प्रणयन के अतिरिक्त अनेक कृतियों के सम्पादन-अनुवाद का श्रेय उन्हें रहा। ज्योतिष विषय पर भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, से **'भद्रबाहुसंहिता'** और साहित्य कुटीर, आरा, से **'मुहुर्त्तदर्पण'**; संस्कृत में **'अलंकारचिन्तामणि'** (भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली), **'रघुवंश-द्वितीय सर्ग'** (ज्ञानदा प्रकाशन, पटना), **'कुमारसम्भव-पंचम सर्ग'** (मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी), **'रत्नाकरशतक'** (देशभूषण ग्रन्थमाला, वाराणसी); प्राकृत के क्षेत्र में **'रिट्ठसमुच्चय'** (साहित्य कुटीर, आरा), **'अगडदत्तचरियं, (तारा यंत्रालय वाराणसी), 'पाइय पज्ज-संगहो पढमो भागो'** और **'पाइय गज्ज-संगहो पढमो भागो'** तथा **'पाइय पज्ज-संगहो वीयो भागो'** (बी.पी.टी.सी. प्रकाशन); विविध विषयक भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली से **'व्रततिथिनिर्णय'** और **'केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि'**, देशभूषण ग्रन्थमाला, वाराणसी, से **'धर्मामृत'**, वीर सेवा मंदिर ट्रस्ट, वाराणसी, से **'लोकविजययंत्र'** तथा भारत जैन महामण्डल, मुम्बई, से **'युग युगों में जैन धर्म'** नामक उनके द्वारा सम्पादित अनूदित कृतियां प्रकाशित हुईं। सन् १९६७ ई. में अ. भा. दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद् द्वारा प्रकाशित ६२७ पृष्ठीय **'गुरु गोपालदास वरैया स्मृति-ग्रन्थ'** के सम्पादक मण्डल में वह सम्बद्ध रहे। मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, में सन् १९७१ ई. में सम्पन्न प्राकृत और पालि अध्ययन सम्बन्धी विद्वानों की संगोष्ठी की कार्यवाही का, हरप्रसाद दास जैन डिग्री कालेज, आरा, से प्रकाशित संस्कृत पत्रिका **'मागधम्'** के प्रथम छह अंकों का सन् १९६६ ई. से १९७३ ई. तक, **'मनीषा'** पत्रिका का लगभग १५ वर्ष तक तथा भारतीय जैन साहित्य संसद की पत्रिका **'भारतीय जैन साहित्य परिवेशन'** का सम्पादन उन्होंने किया था।

'विष्णुपुराण में प्रतिपदित भारत', **'अभिधानचिन्तामणि'**, **'वैजयन्ती कोष'**, **'ज्वलित प्रदीप'**, **'रूपक'**, **'शब्द रत्नावली'** तथा **'युग और साहित्य'** प्रभृति अन्य विद्वान् मनीषियों की कृतियों पर चिन्तनपूर्ण भूमिकाएं लिखने का श्रेय भी शास्त्री जी को रहा।

इनके अतिरिक्त जिन कृतियों का प्रणयन उन्होंने आरम्भ किया, किन्तु अपने जीवनकाल में पूरा न कर पाने से उनका स्वप्न अधूरा रह गया वे हैं- १. **महाकवि कालिदास की उपमान योजना**, २. **वाक्यगठन : वृत्तिविचार**, ३. **अर्थमीमांसा-**

सिद्धान्त और विनिमय, ४. **महाकवि बाण के शतशब्द**, ५. **संस्कृत ऐतिहासिक नाटकों का विवेचनात्मक अनुशीलन**, ६. **जैन दर्शन**, ७. **संस्कृत कवियों का जीवन दर्शन**, ८. **समराइच्चकहा (सम्पादन)** और ९. **चन्द्रान्मीलन प्रश्न (सम्पादन)**।

डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री जी न केवल साहित्य-साधक मनीषी थे, अपितु समाज-सेवक और लोक-सेवक भी थे। उनकी सेवाएं एवं प्रवृत्तियां बहुमुखी थीं। वे देवकुमार जैन प्राच्य विद्या शोध-संस्थान, आरा, के मानद निदेशक; अखिल भारतीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् सागर के उपाध्यक्ष; श्री गणेश वर्णी दिगम्बर जैन संस्थान, वाराणसी, के संयुक्त मंत्री; वीर सेवा मन्दिर ट्रस्ट, वाराणसी, के ट्रस्टी; तथा स्याद्वाद महाविद्यालय वाराणसी, की प्रबन्धकारिणी के सदस्य थे। यही नहीं, अहिंसा, प्राकृत और जैन विद्या शोध संस्थान, वैशाली (बिहार) एवं बिहार प्रान्तीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के मानद सदस्य थे। उज्जैन में सम्पन्न अखिल भारतीय प्राच्य-विद्या सम्मेलन के २६वें अधिवेशन में प्राकृत और जैन विद्या विभाग के अध्यक्ष बनने का सम्मान उन्हें प्राप्त रहा। वह भोजपुर जनपदीय हिन्दी साहित्य संस्था के सन् १९६९ ई. से अध्यक्ष; नागरी प्रचारिणी सभा, आरा, के उपाध्यक्ष; बिहार प्रदेशीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन की कार्यकारिणी के सदस्य; हिन्दी परामर्शदात्री समिति, भोजपुर, के सक्रिय सदस्य भी रहे। इस प्रकार अनेक संस्थाओं से जुड़े वह स्वयं में एक संस्था थे।

बहुआयामी प्रतिभा के धनी, सरस्वती के वरदपुत्र, सिद्धहस्त लेखक-रचनाकार डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री जी बीसवीं शती ईस्वी की एक ऐसी विभूति रहे जिन पर जैन समाज को ही नहीं अपितु माँ भारती को गर्व है। उनकी लेखनी ने जिन-जिन विषयों का स्पर्श किया उन पर आगे कार्य करने वालों के लिये वह सतत् प्रेरणास्रोत रहेंगे। इस वर्ष २ जनवरी को उनके ९३वें जन्म दिन तथा १० जनवरी को ३४वीं पुण्यतिथि पर उनकी स्मृति में हमारा भी सादर नमन् है।

२१-१-२००८ **- रमा कान्त जैन**

"पुराने घाट, नयी सीढ़ियां" में पाठक नयी सीढ़ियों के सहारे घाट-तीर्थ पर पहुँच शीतल जल पान करके अपनी तृषा का शमन करेंगे। इस संग्रह की समस्त कथाओं का उत्स प्राकृत कथाएँ हैं। जो लघु झरना ऊबड़-खाबड़ भूमि में प्रवाहित हो रहा था, जिसका मधुर शीतल जल पाषाणखण्डों के मध्य असमतल रूप में विकीर्णित था, उसे चट्टानों और पाषाणखण्डों को हटाकर समतल भूमि पर लाने का प्रयास किया है। प्राचीन संस्कृति को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में उपस्थित कर वर्तमान भारत को इन कथाओं द्वारा जीवनी शक्ति देने की चेष्टा की गयी है। पाठक स्वयं घाट पर मज्जन-पान कर उक्त कथन की सत्यता का अनुभव कर सकेंगे।

- डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

सम्पादकीय

स्वागत योग्य निर्णय

शनिवार, १५ मार्च, २००८ के लखनऊ से प्रकाशित 'दि पायनियर' में उल्लिखित उच्चतम न्यायालय के निर्णय को पढ़कर मन मुग्ध हो गया। गुजरात सरकार ने अपने प्रदेश के जैन धर्मानुयायियों की भावनाओं का समादर करते हुए उनके धार्मिक पर्व पर्यूषण के दौरान राज्य में मांस एवं मांसाहारी खाद्य वस्तुओं की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगाया था। लगभग ३००० कसाइयों के एक समूह ने राज्य सरकार के उक्त प्रतिबन्ध आदेश को कोई भी व्यवसाय करने के उनके मौलिक अधिकार पर अतार्किक प्रतिबन्ध करार देते हुए उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी थी। उक्त जनहित याचिका की सुनवाई न्यायमूर्ति एच. के. सेमा और न्यायमूर्ति मार्कण्डेय काटजू की पीठ ने की। पीठ ने यह कहते हुए कि चूंकि प्रतिबन्ध थोड़े समय के लिये है उसे उचित ठहराया और याचिका खारिज कर दी। वकीली बहसों का उत्तर देते हुए और अपना निर्णय अभिलिखित करते हुए न्यायमूर्ति काटजू ने याचिकाकर्ताओं को मध्यकालीन दार्शनिकों, शासकों और शहजादों का स्मरण कराया जिनका आचरण धार्मिक सहिष्णुता और त्याग की मिसाल रहा। उन्होंने प्रश्न किया "यदि बादशाह अकबर गुजरात में वर्ष में ६ माह मांस भक्षण पर प्रतिबन्ध लगा सकता था तब क्या आज अहमदाबाद में साल में नौ दिन मांस से विरत रहना अतार्किक है?" उन्होंने यह भी कहा कि "महान मुग़ल बादशाह अकबर स्वयं सप्ताह में कुछ दिन भारतीय समाज के शाकाहारी वर्ग और अपनी हिन्दू बेगम की भावनाओं का समादर करते हुए शाकाहारी रहता था। हमें भी दूसरों की भावनाओं का, भले ही वह अल्पसंख्यक समुदाय के हों, समादर करना चाहिये।"

पीठ ने प्रस्तुत मामले का हवाला देते हुए कहा "हमारे जैसे इतनी विविधता के साथ बहु संस्कृतियों वाले देश में किसी को किसी छोटे से प्रतिबन्ध, जो समाज के वर्ग विशेष की भावनाओं का समादर करते हुए लगाया जा रहा हो, के सम्बन्ध में इतना अधिक संवेदनशील और भावुक नहीं होना चाहिये।" उन्होंने यह भी जोड़ा "हम ये टिप्पणियां इसलिये कर रहे हैं क्योंकि आजकल अपने देश में असहिष्णुता की बढ़ती हुई प्रवृत्ति हमारे संज्ञान में आ रही है।"

उच्चतम न्यायालय की पीठ द्वारा मामले में दिया गया निर्णय और उसके द्वारा व्यक्त किये गये तर्क सम्मत विचार समाज के प्रत्येक वर्ग की भावना का समादर करने वाले तथा समाज में सौहार्दपूर्ण वातावरण का सृजन करने वाले हैं। धार्मिक सहिष्णुता, जीव दया और शाकाहार के पोषक भी हैं। गुजरात सरकार द्वारा धार्मिक पर्वों के दौरान समाज के शाकाहारी वर्ग की भावनाओं का समादर करते हुए अपने राज्य में मांस एवं मांसाहारी खाद्य पदार्थों की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगाया जाना भी स्वगात योग्य कदम है। अन्य राज्य सरकारों द्वारा उसका अनुकरण किया जाना अभीष्ट है।

- **रमा कान्त जैन**

सरस्वती वन्दन

आचाराङ्गादि भेदेन पूर्वान्तांश्च प्रकीर्णकान्।
निर्गतां जिनसद्वक्त्रात् सारदां नौमि शारदाम्।। - ब्रह्मजित
सर्वं विद् हिमवदुक्त सरोद्धार विनिर्गता।
वाग्गंगा हि भवत्वेषा मे मनोमलहारिणी।। - कमल कीर्ति
दिश्यात्सरस्वती बुद्धिं मम मन्दधियो दृढ़ां।
भक्त्यानुरंजिता जैनी मातेव पुत्रवत्सला।। - गुणभद्र
नानावृत्त पदन्यास वर्णालंकाहारिणी।
सन्मार्गांगी सिता जैनी प्रसन्ना नः सरस्वती।। - अरिष्टनेमि।
प्रसन्नवदना- चतुर्भुजा- सर्वालंकारविभूषिता हे माँ शारदे
पुस्तकधारिणी स्व कण्डल से ज्ञानवारि ढार दे
जग-कल्याणी अज्ञान-तिमिर हरो तुम शीघ्र ही,
मति कर विमल मेरी, लेखनी में धार दे।।

- **रमा कान्त**

मल्लिषेण प्रशस्ति

- डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

श्रवणबेलगोलस्थ चन्द्रगिरि पर्वत की पार्श्वनाथ बसति के एक स्तम्भ के चारों ओर उत्कीर्ण संस्कृत भाषा का अति विस्तृत लेख (७२ पद्य) **'मल्लिषेणप्रशस्ति'** के नाम से प्रसिद्ध है। यह लेख **एपीग्राफिया कर्णाटिका** (जिल्द २), **श्रवणबेलगोल के शिलालेख** (संपादक लूइस राइस), **श्रवणबेलगोल शिलालेख** (संपादक आर. नरसिंहाचार्य), **सोर्सेज ऑफ दी हिस्ट्री ऑफ कर्णाटक** (श्रीकंठ शास्त्री) और **जैन शिलालेख संग्रह भाग १** (माणकचन्द दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला, मुम्बई, पृ. १०१-११४) पर मुद्रित प्रकाशित हुआ है और इसका नम्बर ५४/६७ है। शक संवत् १०५० (= ११२८ ई.) की फाल्गुन शुक्ल ३, रविवार के दिन, स्वाति नक्षत्र में मध्याह्न के समय मल्लिषेण मलधारी नाम के महामुनि ने तीन दिवस के अनशन पूर्वक सल्लेखना व्रत का पालन करते हुए श्रवणबेलगोल के श्वेत सरोवर के तट पर देह त्याग कर स्वर्ग प्राप्त किया था। इसी उपलक्ष में उक्त मुनिराज के गृहस्थ शिष्य मदन-महेश्वर मल्लिनाथ ने इस प्रशस्ति की रचना की थी और शिल्पीं श्रेष्ठ गंगाचारि ने इसे उक्त स्तम्भ पर उत्कीर्ण किया था।

लेख के प्रारम्भ में भगवान महावीर, गणधर इन्द्रभूतिगौतम तथा श्रुतकेवलियों की स्तुति के उपरांत निम्नोक्त आचार्यों की क्रम से स्तुति की गई है :-

(१) **भद्रबाहु-** जो मोहमल्लमर्दन-वृत्तबाहु तथा अकथनीय महिमा वाले थे।

(२) **चन्द्रगुप्त-** जो उपरोक्त भद्रबाहु के शिष्य थे, वनदेवताओं ने चिरकाल तक इनकी सेवा की थी।

(३) **कौण्डकुन्द-** महान्कीर्ति के धारक आचार्य जिनके द्वारा जिनवाणी या जिनागम संपूर्ण भारतवर्ष में प्रतिष्ठा को प्राप्त हुआ।

(४) **समन्तभद्र आचार्य-** जिन्हें भस्मकव्याधि हो गई थी, पद्मावती देवी का जिन्हें इष्ट था, जिनके वचनबल से चन्द्रप्रभु की प्रतिमा प्रगट हुई थी, जिनके अनेक शिष्य थे और कलिकाल में जिन्होंने जैनधर्म की महती प्रभावना की थी। (आगे चूर्णि में स्वयं आचार्य के मुख से किसी राजा की सभा में, अपने वादार्थ देश-विदेश भ्रमण का वर्णन उद्धृत है।)

(५) **सिंहनन्दि मुनि-** जिनके आशीर्वाद से उनके शिष्य ने शिलास्तम्भ को एक बार में ही भग्न करके राज्य प्राप्त किया था।

(६) **वक्रग्रीव महामुनि-** जो किसी वाद में छः मास पर्यन्त केवल 'अथ' शब्द की ही व्याख्या करते रहे।

(७) **वज्रनन्दि-** जो ऐसे सुन्दर **'नवस्तोत्र'** के रचयिता थे जिसमें कि सकल अर्हत् प्रवचन प्रपंच का अन्तर्भाव हुआ था।

(८) **पात्रकेसरि गुरु-** जिन्होंने पद्मावती की सहायता से त्रिलक्षण सिद्धांत का खण्डन किया था- **'त्रिलक्षणकदर्थन'** ग्रन्थ की रचना की थी।

(९) **सुमतिदेव-** जिन्होंने **सुमति सप्तक** की तथा **सुमति (या सन्मति) विवृत्ति** की रचना की थी।

(१०) **कुमारसेन मुनि-** जो दक्षिण देश में उत्पन्न हुए थे और जिनका प्रकाश सूर्य के समान संसार में फैला था।

(११) **चिन्तामणि मुनि-** जिन्होंने **'चिन्तामणि'** नामक सुन्दर ग्रन्थ में धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष रूपी चार पुरुषार्थों का निरूपण किया था।

(१२) **श्री वर्द्धदेव कविचूड़ामणि-** जिनका काव्य **'चूड़ामणि'** बड़े-बड़े कवियों द्वारा सेव्य था। (चूर्णि में श्री वर्द्धदेव की प्रशंसा में कहा गया महाकवि दण्डी का श्लोक उद्धृत है)।

(१३) **महेश्वर मुनीश्वर-** जिन्होंने ७०० महावादों में विजय प्राप्त की थी और ब्रह्मराक्षसों ने जिनकी पूजा की थी।

(१४) **अकलंकदेव-** जिन्होंने घटस्थापित तारादेवी का विस्फोट करके बौद्धों को वाद में पराजित किया था। (चूर्णि में राजा साहसतुंग की सभा में तथा राजा हिमशीतल की सभा में उनके द्वारा बौद्धों को पराजित किये जाने के वर्णन को उद्धृत किया गया है।)

(१५) **पुष्पसेन मुनि-** जो उन्हीं देव (अलकंलदेव) के सधर्मा थे और राजा श्री विक्रम की सभा को सुशोभित करते थे।

(१६) **विमलचन्द्र मुनीन्द्र-** जो महापण्डित, गुरुओं के गुरु और वादियों का मदभंजन करने वाले थे। (चूर्णि में उनके द्वारा राजा शत्रुभयंकर के सभा द्वार पर लगाये गये वादपत्र-चेलेंज- के श्लोक उद्धृत हैं।)

(१७) **इन्द्रनन्दि मुनि**- जो दुरित ग्रहों का निग्रह करने वाले, अनेक राजाओं द्वारा वन्दित और भव्यदेही थे।

(१८) **परवादिमल्ल देव**- जो घटवाद घटाकोटिकोविद थे। (चूर्णि में कृष्णराज के समक्ष अपने नाम की सार्थकता प्रगट करने वाला स्वयं उनका श्लोक उद्धृत है।)

(१९) **आर्यदेव आचार्य**- जो सिद्धान्तकर्त्ता थे और जिन्होंने कायोत्सर्ग-आसन से स्थित रहते हुए देह त्याग दिया था।

(२०) **चन्द्रकीर्त्तिगणी**- जिन्होंने शिष्यों के ऊपर अनुकम्पा करके **'श्रुतबिन्दु'** नामक महान् ग्रन्थ की रचना की थी।

(२१) **कर्म्म प्रकृति भट्टारक**- जिन्होंने मृत्यु को जीत लिया था (संभवतया कर्मसिद्धांत पर कोई ग्रंथ भी रचा था।)

(२२) **श्रीपालदेव त्रैविद्य**- जो समस्त विद्याओं के पारगामी थे और जिनकी बुद्धि तत्वविवेचन में लीन रहती थी।

(२३) **मतिसागर गुरु**- प्रशंसापूर्वक उल्लेख है।

(२४) **हेमसेन मुनि**- विद्याधनंजय पद्मविभूषित महामुनि। (चूर्णि में उनके द्वारा अपने किसी शिष्य राजा की सभा में की गई गर्वोक्ति उद्धृत है, जिससे वे तर्कशास्त्र, व्याकरण आदि के पारगामी रहे सूचित होते हैं।)

(२५) **दयापाल मुनि**- जो **'रूपसिद्धि'** नामक व्याकरण शास्त्र के रचयिता थे।

(२६) **वादिराज**- जो मतिसागर गुरु के शिष्य और दयापाल व्रती के सधर्मा थे, राजाओं द्वारा पूजित और महान वादी थे, जिनकी वाणी त्रैलोक्यदीपिका थी, इत्यादि प्रभूत प्रशंसा (चूर्णि में चालुक्य चक्रेश्वर जयसिंह की राज सभा में वाद विजयों द्वारा सम्मान प्राप्त करने का वर्णन है।)

(२७) **श्री विजय**- जो गंगनरेश के गुरु थे और अनेक गुणविभूषित थे, (चूर्णि में उन्हें वादिराज द्वारा स्तुत तथा हेमसेन मुनि का उत्तराधिकारी-पट्टशिष्य बताया है।)

(२८) **कमलभद्र** मुनि-प्रशंसा।

(२९) **दयापाल पण्डित**- महासूरि, सकल शास्त्रज्ञ, वादी।

(३०) **शान्तिदेव यमिन**- जिनके चरणकमल राजा विनयादित्य पोयसल द्वारा पूजित हुए थे।

(३१) **चतुर्मुखदेव**- जिन्हें पाण्ड्य नरेश ने 'स्वामी' की उपाधि दी थी और राजा आहवमल्ल ने 'चतुर्मुख' उपाधि प्रदान की थी।

(३२) **गुणसेन पण्डित**- मुल्लूर के, जो राजाओं द्वारा पूजित थे।

(३३) **अजितसेन वादीभसिंह**- पण्डितदेव, व्रतिपति, गणभृत, स्याद्वादविद्याविद, सकलनरेन्द्र पूजित, इत्यादि। इनकी प्रभूत प्रशंसा और गुणगान हैं (चूर्णि में भी इनके अनुश्रुत प्रशंसा वाक्य उद्धृत हैं।)

(३४) **शान्तिनाथ कविताकान्त**- उक्त अजितसेन के शिष्य हैं।

(३५) **पद्मनाभ वादिकोलाहल**- भी उक्त अजितसेन के शिष्य हैं।

(३६) **कुमारसेनपति**- यह भी अजितसेन के शिष्य हैं।

(३७) **मल्लिषेण मलधारीदेव गुरु**- अजित सेन पण्डितदेव के परम भक्त शिष्य। इनकी प्रभूत प्रशंसा के उपरान्त समयादि सहित उनकी सल्लेखनापूर्वक मृत्यु का वर्णन है।

अन्त में विरुद लेखक मदनमहेश्वर मल्लिनाथ और विरुद-रुत्वारि मुखतिलक (शिल्पी) गंगाचारि का नामोल्लेख है।

इस अभिलेख में किसी संघ-गण-गच्छ का कहीं कोई उल्लेख नहीं है, किंतु मल्लिषेण मलधारी के स्वयं के तथा उनकी कई पीढ़ी आगे और पीछे के अनेक लेखों से स्पष्ट है कि यह मल्लिषेण मलधारि मूलसंघान्तर्गत द्रमिल (द्रविड़) गण, नन्दिसंघ, अरुङ्गलान्वय के आचार्य थे।

लेख में कई त्रुटियां हैं- दो-चार को छोड़कर उपरोक्त ३७ गुरुओं में से अन्य किसी का परस्पर संबंध (गुरु, शिष्य, सधर्मा आदि) सूचित नहीं किया गया। अन्तिम को छोड़कर किसी भी आचार्य के समयादिक का कहीं कोई संकेत नहीं किया गया। भगवान महावीर के तीर्थ में दक्षिणापथ के विभिन्न प्रदेशों में जैन धर्म का उद्योत, उत्कर्ष, प्रचार और प्रसार करने वाले महान् प्रभावक एवं वादविजेता प्रमुख आचार्यों की ही यह सूची है। इसके आधार पर किसी संघ विशेष की परम्परा गठित करना भी कठिन है, क्योंकि उल्लिखित आचार्यों की गुरु-शिष्य परम्पराओं में से अनेक नाम छूटे हुए हैं और सेन तथा सिंह गणों के प्रायः एक भी आचार्य का उल्लेख नहीं है। देवगण के भी केवल अकलंक को छोड़कर अन्य किसी का नाम नहीं है। पुन्नाट तथा अन्य प्राचीन अन्वयों के गुरुओं का भी उल्लेख नहीं है। नंदिसंघ की परम्परा में से भी पूज्यपाद देवनंदि और विद्यानंदि जैसे प्रसिद्ध नाम छूट गये हैं।

तथापि यह अभिलेख जैन संघ और साहित्य के इतिहास की दृष्टि से दक्षिण भारत में प्राप्त प्रायः समस्त शिलालेखों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। अनेक जैन और जैनेतर

इतिहासकार विद्वानों ने इसका बहुत उपयोग भी किया है। किन्तु उन विद्वानों ने अन्य साधनों तथा इसके अन्य अभिलेखादि के साथ तुलनात्मक अध्ययन के अभाव में बहुधा गलत निष्कर्ष निकाले हैं, जिसमें इस शिलालेख का उतना दोष नहीं है। वस्तुतः इसमें दक्षिण देशवर्ती तथा अपने से पूर्ववर्ती, दिगम्बर सम्प्रदाय के उन प्रधान आचार्यों को ले लिया है जो या तो संघ भेद से ऊपर थे अर्थात् सभी संघों, अन्वयों आदि द्वारा समान रूप से सम्मान्य थे, अथवा नन्दि संघ से, चाहे वह मूलसंघान्तर्गत था अथवा यापनीय, द्रविड आदि अन्य संघों से सम्बंधित था, किसी न किसी प्रकार सम्बंधित थे, विशेषतः यदि उन आचार्यों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में द्रविण देश (या तमिल देश जिसमें पाण्ड्य, चोल, चेर, आन्ध्र आदि के भाग सम्मिलित थे और जिसका बहुभाग मद्रास राज्य में सम्मिलित रहा है) में जैन धर्म के प्रचार प्रसार आदि में योग रहा था। ९-१०वीं शताब्दी ईस्वी में जब द्रमिल या द्रविण संघ का नंदिगण अपने अरुङ्गलादि अन्वयों सहित भली प्रकार व्यवस्थित हो गया हो तब अपनी पूर्व परम्परा में उन्होंने उक्त महान आचार्यों को अपना लिया। इस संघ के अन्य शिलालेखों के साथ प्रस्तुत अभिलेख का अध्ययन करने से इस संघ की परम्परा प्रायः अकलंकदेव के समय तक सुव्यवस्थित हो जाती है, उसकी टूटी हुई अनेक कड़ियां मिल जाती हैं। साथ ही उपरोक्त आचार्यों के समयादि के निर्धारण में बड़ी सुगमता हो जाती है। प्रशस्ति लेखक ने जिन आचार्यों का स्मरण किया है उनकी स्तुति ऐसे नपे तुले शब्दों में की है और उनकी अपनी-अपनी विशिष्टताओं का इस प्रकार संकेत किया है कि अन्य तमाम आचार्यों से उन्हें चीन्ह लेना कठिन नहीं है। विशेष आचार्यों के वर्णन में चूर्णि रूप से जो कथन किये हैं उनके द्वारा इस लेख ने परम्परागत लिपिबद्ध किन्तु स्फुट वा यत्र-तत्र बिखरी हुई अनुश्रुतियों का भी संरक्षण किया, उनकी प्राचीनता और आपेक्षिक प्रामाणिकता निश्चित कर दी। भली प्रकार जांच करने से यह बात भी निस्सन्दिग्ध हुई है कि उल्लिखित आचार्यों का जिस क्रम से उल्लेख हुआ है वह सर्वथा ठीक है, यह बात दूसरी है कि किन्हीं दो आचार्यों के बीच कितने समय का या कितनी पीढ़ियों का अन्तराल है, या कुछ अन्तराल नहीं है, यह कहना तनिक कठिन है, विशेषकर अकलंक से पूर्व उल्लिखित आचार्यों में। इन सब बातों से यह भली प्रकार स्पष्ट है कि इस प्रशस्ति का लेखक मदन महेश्वर मल्लिनाथ भारी ऐतिहासिक सूझ बूझ का विद्वान था और प्राचीन इहितास के उपलब्ध साधनों का उसने प्रसंगानुसार संक्षेप में अच्छा उपयोग किया था।

- जैन सन्देश शोधांक ६ (४ फरवरी, १९६० ई. से उद्धृत)

पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं सादगी से

- श्री अजित प्रसाद जैन

सुप्रसिद्ध प्रतिष्ठाचार्य पं. फतेहसागर जी ने फरवरी सन् २००० ई. में दिल्ली, डूंगरपुर तथा डिब्रूगढ़ में अपने द्वारा सम्पन्न कराई जाने वाली पंच कल्याणक प्रतिष्ठाओं को अत्यन्त सादगी के साथ, साज-सज्जा रहित, बिना किसी नाटकीय प्रदर्शन के, कराने का निर्णय लिया है। इन प्रतिष्ठाओं में व्यसनी कलाकारों को न बुलाकर केवल पूजा-पाठ, प्रवचन तथा मन्त्रोचार की क्रियाओं पर विशेष ध्यान देकर तीर्थंकर प्रभु के आदर्श चरित्र को ही प्रस्तुत किया जायेगा। उन्होंने कोटा व मुम्बई में होने वाली प्रतिष्ठाओं के आयोजकों को भी तदनुसार सुझाव दिया है।

प्रतिष्ठाचार्य जी का निर्णय समय की मांग है, अभिनन्दनीय है तथा अन्य प्रतिष्ठाचार्यों द्वारा अनुकरणीय है। आशा है प्रतिष्ठाचार्य जी ने अपने पारिश्रमिक/दक्षिणा में भी तदनुसार ही कटौती कर दी होगी। वैसे हमारी समझ में तो अब **पंच कल्याणक प्रतिष्ठाओं पर रोक लगानी चाहिए। हमें अपने मंदिरों को मूर्तियों का संग्रहालय नहीं बनाना चाहिए, अत्यधिक मूर्तियां अविनय का ही कारण बनती हैं। नवीन मंदिरों को भी यथासम्भव अन्य मंदिरों से प्रतिष्ठित मूर्ति प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। प्राचीन सिद्धक्षेत्रों, कल्याणक क्षेत्रों व मन्दिरों के जीर्णोद्धार-विकास पर अधिक ध्यान दिया जाना आवश्यक है।**

(शोधादर्श-३९ (नवम्बर १९९९ ई.) से उद्धृत)

पद

हम तो कबहुँ न निज घर आये।
पर घर फिरत बहुत दिन बीते, नाम अनेक धराये।।
पर पद निजपद मानि मगन ह्वै, पर परनति लपटाये।
शुद्ध बुद्ध सुखकन्द मनोहर, चेतन भाव न भाये।।
नर, पशु, देव, नरक निज जान्यौ, परजय बुद्धि लहाये।
अमल, अखण्ड, अतुल, अविनाशी आतमगुन नहिं गाये।।
यह बहु भूल भई हमरी, कहा काज पछताये।
'दौल' तजौ अजहूँ विषयन को, सतगुरु वचन सुहाये।।

उपर्युक्त पद में हाथरस निवासी अध्यात्म रसिक कवि दौलतराम पल्लीवाल (सन् १७९८-१८६६ ई.) ने अपनी अन्तरात्म की आवाज व्यक्त की है।

जैन सन्देश शोधांक - एक पर्यालोचन

- डॉ. शशि कान्त

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ

जैन सन्देश का **रजत जयन्ती विशेषांक** १६ अप्रैल, १६६२ ई., को प्रकाशित हुआ था। उसमें **श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ** की स्थापना और उसके मुख पत्र के रूप में **जैन सन्देश साप्ताहिक** के तथा शोध पत्र के रूप में **जैन सन्देश शोधांक** के प्रकाशन के सम्बन्ध में विविध उपयोगी सामग्री प्राप्त होती है। उस समय तक **संघ** के संस्थापक विद्वान मनीषी तथा **जैन सन्देश साप्ताहिक** और **जैन सन्देश शोधांक** के विद्वान सम्पादकगण जैन धर्म के प्रचार, जैन समाज में जागरूकता का प्रसार और जैन इतिहास में शोध प्रवृत्तियों को उत्प्रेरित करने में कर्मठतापूर्वक अपना योगदान कर रहे थे। उस समय **जैन सन्देश साप्ताहिक** के सम्पादक पं० जगन्मोहनलाल शास्त्री (कटनी) और पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री (वाराणसी) थे, तथा **जैन सन्देश शोधांक** के सम्पादक डॉ० ज्योति प्रसाद जैन (लखनऊ) थे। जैन समाज के तत्कालीन श्रेष्ठी एवं विद्वत् समुदाय के ५१ महानुभावों की शुभ कामनाओं के अतिरिक्त ३२ विद्वानों के आलेख इसमें सम्मिलित हैं।

श्री प्रकाश जैन, श्री शांतिस्वरूप 'कुसुम', कविवर 'सरस', श्री कल्याण कुमार 'शशि', पं० जुगलकिशोर मुख्तार, पं० अजितकुमार शास्त्री, श्री रतनलाल कटारिया, श्री अगरचन्द नाहटा, श्री दरबारीलाल कोठिया, श्री नाथूलाल शास्त्री, श्री नेमिचन्द शास्त्री, श्री 'सुधेश' जैन, श्री मल्लिनाथ शास्त्री, श्री "स्वतंत्र", श्री सुल्तानसिंह, श्री राजाराम, श्री राजकुमार शास्त्री, श्री नीरज जैन, श्री हरकचंद सेठी, डॉ० प्रेमसागर, श्री कांतिकुमार 'अरुण', श्री कन्छेदीलाल शास्त्री, श्री श्यामलाल पांडवीय, श्री कपूरचन्द वरैया, पं० परमानन्द शास्त्री, श्री रतनलाल पाटनी, श्री वंशीधर, डॉ० गुलाबचन्द, श्री मिलापचन्द कटारिया, डॉ० ज्योति प्रसाद जैन, पं० इन्द्रचन्द्र शास्त्री और पं० जगन्मोहनलाल शास्त्री के आलेखों में **श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ** की स्थापना और **जैन सन्देश** एवं **जैन सन्देश शोधांक** के प्रकाशन की पृष्ठभूमि पर समुचित प्रकाश डाला गया है।

यह उल्लेखनीय है कि शास्त्रार्थ में तर्कपूर्ण ढंग से जैन सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने और **जैन सन्देश** के माध्यम से जैन समाज के भीतर असामाजिक तत्वों की

निर्भीकतापूर्वक समालोचना करने तथा कड़े से कड़े विरोध के बावजूद समाज को ऊंचा उठाने के हित में उचित बातों का समर्थन करने में **श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ** निरन्तर तत्पर रहा। **जैन सन्देश** के **रजत जयन्ती विशेषांक** के अवलोकन से यह विदित होता है कि उस समय जो मनीषी **संघ** से, **साप्ताहिक जैन सन्देश** से और **जैन सन्देश शोधांक** से जुड़े थे वे मुनि मार्ग को मलिन बनाने वाले नवोदित साधु भेषियों के प्रति आस्था से विगलित नहीं थे और इसीलिए किसी मुनि पुंगव का शुभकामना सन्देश अथवा आशीर्वचन इसमें सम्मिलित नहीं है।

१६२० के दशक में **आर्य समाज** के प्रचारकों की ओर से स्वामी दयानन्द के **सत्यार्थ प्रकाश** के दसवें समुल्लास के आश्रय से जैन धर्म के प्रति असंगत आक्षेप किये गये। इसका विशेष प्रभाव-क्षेत्र पंजाब एवं पश्चिमी संयुक्त प्रान्त (अब **उत्तर प्रदेश**) रहा जहां आर्य समाज का विशेष प्रभाव था। आर्य समाज द्वारा किये जा रहे धार्मिक आक्षेपों का समुचित उत्तर देने के लिए अम्बाला में **श्री शास्त्रार्थ संघ** की स्थापना हुई और अप्रैल १६३० में अम्बाला में ही जैन समाज का आर्य समाज के साथ सफल शास्त्रार्थ हुआ। उसके बाद अम्बाला छावनी में ही पं० अजित कुमार शास्त्री (दिल्ली), लाला शिब्बामल (अम्बाला), पं० अरहदास (पानीपत), पं० मंगलसेन (अम्बाला) और पं० राजेन्द्र कुमार न्यायतीर्थ प्रभृति मात्र पांच समाजचेता महानुभावों ने **श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघ** के नाम से एक संस्था की स्थापना की। ३० मई, १६३७ ई. की मीटिंग में उसका नाम **श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ** कर दिया गया और तब से यह संस्था इसी नाम से विद्यमान है। १६४०-४१ में मथुरा के चौरासी क्षेत्र में संघ का अपना भवन निर्मित हो गया और संघ का केन्द्रीय कार्यालय अम्बाला से मथुरा को स्थानान्तरित हो गया।

जैन सन्देश

१६३३ ई. में **जैन दर्शन** नाम से एक पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया गया। अंततः १६४१ ई. में आगरा के बाबू कपूरचंद द्वारा संचालित, साप्ताहिक पत्र **जैन सन्देश** को संघ के मुख पत्र के रूप में अंगीकार कर लिया गया। बाबू कपूरचंद ने इस का प्रकाशन अप्रैल १६३७ ई. में अपने व्यक्तिगत प्रयास से प्रारंभ किया था, और उन्होंने उदारतापूर्वक **जैन सन्देश** को संघ का मुख पत्र बनाये जाने के लिए अपनी सहमति प्रदान कर दी थी। तदनुसार अप्रैल १६६२ ई. में **जैन सन्देश** के प्रकाशन के २५ वर्ष पूर्ण होने पर **रजत जयन्ती विशेषांक** प्रकाशित किया गया।

यह संतोष का विषय है कि इस पत्र का प्रकाशन आज भी नियमित रूप से हो रहा है परन्तु अब यह साप्ताहिक के बजाय पाक्षिक है। इसके प्रकाशन की निरन्तरता का श्रेय विशेष रूप से पं० ताराचंद 'प्रेमी' को है। संघ का भवन और उसमें स्थित पुस्तकालय मथुरा में आज भी हैं परन्तु उनका सदुपयोग कदाचित् नहीं हो पा रहा है। संघ जिन उद्देश्यों से प्रारंभ किया गया था वे उद्देश्य भी अब प्रायः कालातीत हो गये हैं। जिन महानुभावों के लेख आदि **रजत जयन्ती विशेषांक** में संग्रहीत हैं उनमें से मात्र दो विद्वान मनीषी ही अब हमारे बीच हैं - श्री नीरज जैन (सतना) और डॉ० राजाराम जैन (नोएडा)। पाक्षिक **जैन सन्देश** के सम्पादन का दायित्व डॉ० राजाराम जैन द्वारा वर्तमान में निर्वहन किया जा रहा है।

जैन सन्देश शोधांक

१९५८ ई. में **अनेकान्त** पत्र के बंद हो जाने और **जैन सिद्धान्त भास्कर** तथा Jaina Antiquary के भी चालू न रहने पर जब साहित्य और इतिहास विषय की चर्चा जैन समाज में एकदम रुक गई थी, **जैन सन्देश** के सम्पादकों ने पत्र का त्रैमासिक **शोधांक** निकालने का प्रस्ताव किया। इस कार्य के लिए एक ऐसे विद्वान सम्पादक की आवश्यकता थी जो शोध की विधा में निष्णात हो। विद्वत्द्वय पं० जगन्मोहनलाल शास्त्री और पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री, डॉ० ज्योति प्रसाद जैन की विद्वत्ता, उनकी शोध विधा तथा उनके आधुनिक तुलनात्मक अध्ययन और तर्क संगत निरूपण से परिचित एवं प्रभावित थे। उन्होंने डॉ० साहब से **शोधांक** के सम्पादन का दायित्व लेने का आग्रह किया। जैन धर्म और इतिहास के प्रति समर्पण के कारण डॉ० साहब उनके आग्रह को टाल नहीं सके, यद्यपि उनकी अन्य व्यस्तताएं उनके समय पर भारी दबाव बनाये हुए थीं। डॉ० साहब द्वारा **शोधांक** के सम्पादन का भार लेने की सहमति प्रदान करने पर **जैन सन्देश** के **शोधांक** को प्रकाशित करने का निश्चय **श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ** द्वारा किया गया। **जैन सन्देश शोधांक** का पहला अंक १७ जुलाई, १९५८ ई. को प्रकाशित हुआ।

पं० परमानन्द शास्त्री ने **रजत जयन्ती विशेषांक** में **शोधांक** योजना पर अपने आलेख में यह स्पष्ट किया है कि **शोधांक** ने समाज में शोध-खोज पत्रिका के अभाव की आवश्यकीय पूर्ति की। डॉ० ज्योति प्रसाद जी ने **शोधांक** के सम्पादन में ही केवल शक्ति नहीं लगाई, किन्तु अनेक शोध-खोज पूर्ण रचनाओं की सृष्टि भी की। **शोधांक** के निकलने से जैन विद्वानों के लिए जहां शोध-खोज का मार्ग प्रशस्त हुआ, वहां अनुसन्धान प्रिय जनता को भी लाभ पहुंचा।

ऐसे ही उद्गार पं० जुगलकिशोर मुख्तार, पं० अजितकुमार शास्त्री, श्री रतनलाल कटारिया, श्री अगरचन्द नाहटा, श्री दरबारीलाल कोठिया, डॉ० नेमिचन्द शास्त्री, श्री हरकचन्द सेठी, प्रो० कन्छेदीलाल शास्त्री, पं० कपूरचन्द वरैया, श्री रतनलाल पाटनी, श्री मिलापचन्द कटारिया, सर भागचंद सोनी, पंडिता चन्दाबाई, पं० पन्नालाल साहित्याचार्य और पं० जगन्मोहनलाल शास्त्री ने भी **शोधांक** के सम्बन्ध में **रजत जयन्ती विशेषांक** में अभिव्यक्त किये थे। पं० जगन्मोहनलाल शास्त्री ने अपने सम्पादकीय में यह स्पष्ट किया कि "पौराणिक तथा ऐतिहासिक काल की जैन सामग्री, जैन रचनाओं और जैनाचार्यों की कृतियों तथा सेवाओं की शोधबीन कर उन्हें समाज के सामने लाने हेतु **संघ** ने अपना त्रैमासिक **शोधांक** निकालना भी पिछले ३ वर्षो से प्रारम्भ किया है। इस कार्य में उसे डॉ० ज्योति प्रसाद जैसे कर्मठ समाज सेवी इतिहासज्ञ व्यक्ति का सम्पादक के रूप में सहयोग प्राप्त हुआ है जिससे इस दिशा में उसकी सेवा की प्रगति बढ़ सकी है। वीर सेवा मंदिर से **अनेकान्त,** जैन सिद्धान्त भवन, आरा, से **जैन सिद्धान्त भास्कर** पत्र जिन्होंने अनेक वर्षों तक शोध के कार्य किए हैं, बन्द हो जाने के कारण इस बात की आवश्यकता भी थी। **जैन सन्देश** ने उसकी भी पूर्ति की।"

डॉ० ज्योति प्रसाद जैन (६ फरवरी, १९१२ - ११ जून, १९८८) वह पहले विद्वान थे जिन्होंने प्राचीन भारतीय इतिहास के सम्यक् निरूपण के लिए जैन स्रोतों के महत्व पर प्रामाणिक और आधिकारिक प्रकाश डाला। पी-एच०डी० के लिए उनके शोध-प्रबन्ध का विषय **प्राचीन भारतीय इतिहास के जैन स्रोतों का अध्ययन** था। १९५६ ई. में उन्हें इस शोध-प्रबन्ध पर आगरा विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच०डी० की उपाधि से अलंकृत किया गया था। इस शोध-प्रबन्ध का प्रकाशन १९६४ में मुंशीराम मनोहरलाल प्रकाशन संस्थान द्वारा प्रथमतः किया गया था और उसी संस्थान द्वारा इसके द्वितीय संस्करण का प्रकाशन २००५ में किया गया है। जैन स्रोतों का सम्यक् आकलन करते हुए भारत के समग्र इतिहास का निरूपण उनके द्वारा **भारतीय इतिहास : एक दृष्टि** में किया गया है जो भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा १९६१ में प्रकाशित हुआ था; उसका दूसरा संस्करण १९६६ में और तीसरा संस्करण १९९९ में प्रकाशित हुआ। इतिहास के प्रति एक समीचीन दृष्टिकोण के साथ डॉ० साहब के समर्पित अवदान को दृष्टिगत रखते हुए उनके इष्ट मित्रों और साथी इतिहास-मर्मज्ञों ने **इतिहास-मनीषी** के सार्थक अलंकरण से उन्हें १२ फरवरी, १९७९, को एक भव्य

सार्वजनिक समारोह में सम्मानित किया था। डॉ० साहब के सम्बन्ध में यह उल्लेख **शोधांक** के माध्यम से उनके योगदान का आकलन करने में उपयोगी होगा।

१७ जुलाई, १९५८ ई. को पहला **शोधांक** प्रकाशित हुआ और अंतिम व ५१वां **शोधांक** १३ अक्टूबर, १९८३ ई. को प्रकाशित हुआ। **शोधांक ५०** में डॉ० साहब ने अपने सम्पादकीय में यह शंका व्यक्त की थी कि प्रकाशन संस्था **श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ** कदाचित् **शोधांक** के प्रकाशन की योजना को चालू नहीं रख सकेगी। डॉ० साहब के सम्पादकीय को यहां उदघृत किया जाना समीचीन होगा - "प्रस्तुत अंक के साथ **शोधांक** की ५० की संख्या पूरी हो गई। १९५८ में जब इस योजना का शुभारंभ किया था तो संकल्प था कि वर्ष में चार, नही तो तीन अंक अवश्य निकालेंगे किन्तु अनेक परवशताओं के कारण यह संभव न हो सका। कागज एवं मुद्रण के स्तर में भी कुछ सुधार न हो पाया। इसका हमें खेद एवं मनस्ताप है। तथापि इन ५० अंकों में जो विविध विषयक शोध-खोज पूर्ण सामग्री प्रकाशित हुई है उसकी अनगिनत जैन एवं जैनेतर विद्वानों तथा प्रबुद्ध पाठकों ने सराहना की है, इतना ही सन्तोष है। हम उक्त समस्त महानुभावों, **शोधांक** के सभी लेखक-लेखिकाओं तथा अपने सहयोगियों के हृदय से आभारी हैं। यदि प्रकाशन-संस्था, श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ के अधिकारीगण की सहमति एवं सहयोग प्राप्त रहा तो श्रृंखला भविष्य में भी चलती रह सकती है। **शोधांक** योजना से **संघ** एवं **जैन सन्देश** का मान तथा गौरव बढ़े ही हैं, और क्षति प्रायः कुछ भी नहीं हुई है।" डॉ० साहब की आशंका उचित थी और फलतः **शोधांक ५१** के प्रकाशन के बाद यह योजना समाप्त हो गयी।

जैन विद्या और भारतीय इतिहास के प्रति उनके समर्पण के कारण अपने अध्ययन के प्रकाशन के लिए डॉ० साहब को नये सूत्र का निर्माण करना आवश्यक प्रतीत हुआ और उन्होंने **तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश,** के माध्यम से **शोधादर्श** का एक चातुर्मासिक शोध पत्रिका के रूप में फरवरी १९८६ में प्रकाशन प्रारम्भ किया। उनके जीवन काल में उसके ६ अंक ही प्रकाशित हो सके, परन्तु उनके आशीर्वाद से **शोधादर्श** का नियमित चातुर्मासिक प्रकाशन होता रहा है और मार्च २००८ में प्रकाशित प्रस्तुत अंक उसका ६४वां अंक है। डॉ० साहब ने शोध पत्रिका के निरूपण की जो परम्परा **जैन सन्देश शोधांकों** के माध्यम से निरूपित की थी उसका आज भी **शोधादर्श** में बहुधा अनुपालन किया जा रहा है।

इस परिप्रेक्ष्य में **जैन सन्देश शोधांक** को **शोधादर्श** के माध्यम से एक निरन्तरता प्रदान कर दी गई है।

जैन सन्देश शोधांक का सूत्र वाक्य "सच्चं लोयम्मि सारभूयं", किंचित् परिवर्तन के साथ **शोधादर्श** में भी अंगीकार किया गया। प्रारम्भ में 'गुरुगुण-कीर्तन' देने की परम्परा भी चालू रखी गई; उनके कनिष्ठ पुत्र श्री रमा कान्त जैन ने **शोधादर्श** के अंक ६ से उसे एक निबन्ध के रूप में प्रस्तुत करना जारी रखा। शोध की विधा को निरन्तरता प्रदान की गई और डॉ० साहब की उस मूल भावना को कि जैन समाज में शोध-खोज के प्रति अभिरुचि जागृत रहे, **शोधादर्श** के माध्यम से जीवन्त रखने का प्रयास उसके सम्पादकों एवं प्रकाशन संस्था **तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश,** द्वारा किया जा रहा है, यह सुखद सन्तोष की बात है। इस सब के लिए डॉ० साहब द्वारा **जैन सन्देश शोधांक** के प्रारम्भ और सम्पादन को श्रेय दिया जाना अपेक्षित है।

२५ वर्षों की अवधि में **जैन संदेश शोधांक** के ५१ अंकों में २०२६ पृष्ठों की, दो कालम के पत्रिका आकार में, मुद्रित सामग्री प्रकाशित हुई। मूलतः यह प्रस्ताव किया गया था कि त्रैमासिक के रूप में वर्ष में चार अंक प्रकाशित किये जायेंगे, परन्तु ऐसा नहीं हो सका। केवल १९६० में चार अंक निकल पाये। कुछ वर्षों में केवल एक ही अंक निकल सका, अधिकांश में दो और कुछ में तीन अंक भी निकले। १९६९ एक ऐसा वर्ष रहा जब एक भी अंक नहीं निकल सका। १९५८ में १७ जुलाई और १८ दिसम्बर को; १९५९ में १६ अप्रैल, १६ जुलाई और २२ अक्टूबर को; १९६० में ४ फरवरी, ७ अप्रैल, २८ जुलाई और २७ अक्टूबर को; १९६१ में ९ फरवरी, १ जून और ३१ अगस्त को; १९६२ में १५ फरवरी, २ अगस्त और ६ दिसम्बर को; १९६३ में १४ मार्च और १० अक्टूबर को; १९६४ में २६ मार्च, १३ अगस्त और २६ नवम्बर को; १९६५ में २० मई और २८ अक्टूबर को; १९६६ में २५ अगस्त को; १९६७ में ९ फरवरी और १२ अक्टूबर को; १९६८ में २९ फरवरी और २८ नवम्बर को; १९७० में १२ मार्च को; १९७१ में ११ फरवरी को; १९७२ में २७ जनवरी और २८ दिसम्बर को; १९७३ में २७ सितम्बर को; १९७४ में २९ अगस्त को; १९७५ में २७ फरवरी और १७ जुलाई को; १९७६ में १७ जून और ७ अक्टूबर को; १९७७ में ९ जून को; १९७८ में २३ फरवरी और ७ दिसम्बर को; १९७९ में ३१ मई और १३ सितम्बर को; १९८० में २६ जून और १८ दिसम्बर

को; १९८१ में २६ मार्च, ९ जुलाई और १० दिसम्बर को; १९८२ में ६ मई और २१ अक्टूबर को; तथा १९८३ में ३१ मार्च और १३ अक्टूबर को, ये अंक क्रमशः प्रकाशित हुए।

जैन सन्देश के ५१ **शोधांकों** में जो विविध सामग्री प्रकाशित हुई है उसका समाकलन नई पीढ़ी के शोधार्थियों और जिज्ञासुओं के उपयोग हेतु किया जाना उपादेय होगा। अतः उसे वर्गीकृत रूप में नीचे दिया जा रहा है। कोष्ठक में **शोधांक** की क्रम संख्या अंकित है।

क - गुरुगुण-कीर्तन

वीर स्तवन (१); श्री वीर निर्वाण (२); ऋषभ स्तवन (३); सरस्वती वन्दन (४); महावीर स्तवन (५); स्तवन (श्री वर्द्धमान जिन) (६); वीर-वन्दना (७); जीयात् वर्द्धमानस्य शासनम् (८); दीवाली महात्म्य (९); आदिनाथ स्तवन (१०); गौतम (११, १२); भद्रबाहु (१३); भद्रबाहु शिष्य मुनिपति चन्द्रगुप्त (१४); कुन्दकुन्द (१५, १६, १७, १८, १९); आगमोद्धार कर्ता ऋषिगण (२०); उमास्वाति (२१, २२); समन्तभद्र (२३, २४, २५); शिवकोटि (२६); कवि परमेश्वर (२७); पूज्यपाद देवनन्दि (२८, २९, ३०, ३१); वक्रग्रीव, वज्रनन्दि (३२); सिद्धसेन (३३); पात्रकेसरि (३४); भट्टाकलंकदेव (३५, ३६, ३७, ३८); जटिलाचार्य, रविषेणाचार्य (३९); धनंजय(४०); श्रीवीरसेनाचार्य (४१, ४२, ४३); जिनसेनसूरि पुण्णाट, श्री जिनसेन स्वामि, श्री गोम्मटेश्वर स्तुति (४४); भदन्त गुणभद्राचार्य, आचार्य माणिक्यनन्दि (४५); विबुध गुणनन्दि (४६); इन्द्रनन्दि मुनीन्द्र (४७); वासवनन्दि-वप्पनन्दि (४८); अभयनन्दि (४९) वीरनन्द्याचार्य (५०); सोमदेवसूरि (५१)।

ख - डॉ० ज्योति प्रसाद जैन के शोध-आलेख

१. जीयात् श्री वीरनाथस्य शासनम् (१)
२, अकलंकदेव और उनका समय (१, २, ३, ४)
३. समसगढ़ - भोपाल का पुरातत्त्व (२)
४. महावीर निर्वाण सम्वत् (५)
५. भगवान महावीर के समय सम्बन्धी एक नवीन भ्रान्ति (५)
६. मल्लिषेण प्रशस्ति (६)
७. भगवद्वावागवादिनी के कर्त्ता (७)
८. धन्यकुमार चरित्र के कर्त्ता गुणभद्र (८)

९. देवर्द्धिगणि का भक्त वल्लभी नरेश कौन था? (९)
१०. त्रिभंगीसार और उसकी सुबोधा टीका (१०)
११. विमलचन्द्रीय अनुश्रुति का 'शत्रुभयंकर' (११)
१२. परवादिमल्लदेव और कृष्णराज (१२)
१३. युगपुरुष वर्णीजी (१३)
१४, देवसेन नाम के ग्रन्थकार (१४, १५)
१५. पूर्वमध्यकालीन मालव इतिहास के जैन स्रोत (१६)
१६. एक मध्यकालीन पट-अभिलेख (१६)
१७, आईने अकबरी में जैन धर्म (१७, १८)
१८. मथुरा का जैन पुरातत्त्व एवं शिलालेख (१९)
१९. मथुरा की जैन कला (२०)
२०. मथुरा के जैन शिलालेख (२१)
२१. पुराणसारसंग्रह और उसके कर्त्ता दामनन्दि (२२)
२२. मथुरा के प्राचीन जैन मुनियों की संघ व्यवस्था (२३)
२३. वजीरखेड़ा ताम्रपत्र (२४)
२४. उत्तर प्रदेश में जैनों की जनसंख्या (२५)
२५. ऐतिहासिक भ्रान्ति परिहार (२६, २७, २८, ३०)
२६. पंचाध्यायी का कर्तृत्व (२९)
२७. जैन-कला संगोष्ठी-सार (३१)
२८. जैन साहित्य के पुस्तकीकरण की पृष्ठभूमि - सरस्वती आन्दोलन (३१)
२९. कोल्हापुर - दक्षिण भारत का एक प्रमुख जैन केन्द्र (३२)
३०. मंत्रीश्वर चाणक्य का जैनत्व (३३)
३१. महावीर-निर्वाण काल (३४, ३५, ३६)
३२. वारंगल के काकातीय राज्य संस्थापक जैन गुरु (३७)
३३. हिन्दी जैन गीत-काव्य (३८)
३४. जैन स्तोत्र साहित्य (३९)
३५. क्या मिथ्यात्वी का आत्मोन्नयन नहीं हो सकता? (४०)
३६. आचार्य यतिवृषभ और उनकी तिलोयपण्णत्ति (४१)
३७. समन्तभद्राचार्य - इतिहास के आलोक में (४२, ४३, ४४)

३८. मुख्तार साहब का स्वप्न उन्हीं के पत्रों की जुबानी (४२, ४३)
३९. स्व. पं. चम्पालाल सिंघई पुरन्दर का एक पत्र (४३)
४०. आचार्य भद्रबाहु श्रुतकेवलि और राजर्षि चन्द्रगुप्त मौर्य (४५)
४१. एक अनुचित आक्षेप (बाहुबलि के महामस्तिकाभिषेक पर) (४५)
४२. समन्तभद्र-कालीन भारत का राजनैतिक इतिहास (४६)
४३. ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में श्रवणबेलगोल के भगवान गोम्मटेश (४७)
४४. कर्णाटक के धर्मभक्त हेग्गड़े (४८)
४५. हिन्दी गद्य के उद्गम एवं विकास की कहानी (४९)
४६. आधुनिक युग-पूर्व हिन्दी के विकास में जैनों का योगदान (५०)
४७. सेठ खेमजी मूलजी भाई और सन्त गोविन्ददास (५०)
४८. आगरा के ऐतिहासिक जैन सम्बन्ध (५१)

ग - डॉ० साहब द्वारा प्रणीत शोधकण

अलंकार चिन्तामणि के कर्ता; जायसवाल जाति की प्राचीनता;
कटक के मंजु चौधरी और उनके वंशज (२)
कोसम से प्राप्त दो शिलालेख; मृगांकलेखा चरित्र की एक प्रति;
आचार्य अनन्तकीर्ति (३)
सतरहवीं शती के एक अंग्रेज द्वारा जैनों का वर्णन;
अयोध्या के जैन श्रीवास्तव नरेश; मलधारी नाम के जैन मुनि (४)
महात्मा बुद्ध का समय; माधवचन्द्र नाम के विभिन्न जैन गुरु;
त्रिलोकसार टीका के कर्ता माधवचन्द्र त्रैविद्य (५)
पाल-युगीन बंगाल में जैनधर्म;
फैजाबाद जिले में प्राप्त कुछ प्राचीन जैन प्रतिमाओं की कहानी;
सन् १९५१ में उत्तर प्रदेश के जैनों की जनगणना (६)
प्राचीन दक्षिण की कलभ्र जाति; बंगाल का सेन वंश;
लक्कुण्डी का जैन मन्दिर (७)
प्राचीन भारत में शिक्षा; महारानी माललदेवी;
माणिक्यसेन नाम के विभिन्न गुरु (८)
धर्मात्मा राजकुमारी हरियल देवी; सुदूर दक्षिण के जैन धर्मी कोंग्गाल्व नरेश;
बालवीर बिट्टियण्ण (९)

श्रुतमुनि नाम के विभिन्न गुरु; विरुदावली महागद्य के वादी विद्यानन्दि;
महारानी विट्ठलदेवी (१०)
ज्ञानभूषण नाम के विभिन्न गुरु; धर्मात्मा रानी अलियादेवी;
टोडारायसिंह भण्डार के शास्त्र (कतिपय संशोधन) (११)
आईने अकबरी में दिल्ली राजावली; त्रिभंगीसार की सुबोधा टीका;
जैनधर्म का एक ८० वर्ष प्राचीन परिचय (१२)
जैन नरेश कोलुत्तुंग चोल; खजुराहो का जैन स्थापत्य;
श्रावकोत्तम चक्रेश्वर (१३)
तुरुष्क; बड़नगर और उसका पुरातत्व; राजा शिवप्रसाद (१४)
छहकालचक्कूसमासु के कर्ता; कवि सधारु का एरच्छ नगर;
वेण्णा नदी और वेण्यातटपुर (१५)
धमौनीपट्ट-अभिलेख के ऐतिहासिक तथ्य; अनन्तवीर्य नाम के विभिन्न गुरु;
भट्टारक सकलकीर्त्ति की जन्म-तिथि (१६)
गुणभद्र कृत धन्यकुमारचरित का रचना-स्थल; कुन्दकुन्द के समय सम्बन्धी
एक श्लोक; भगवान महावीर ज्ञातवंशी थे (१७)
नेमिनिर्वाण काव्य का अहिच्छत्रपुर; 'हम्मीर' कौन था?;
एक विचित्र जैन प्रस्तरांकन (आर्किलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट, २२, पृ. ३५) (१८)
पद्मप्रभ मलधारिदेव की मृत्यु तिथि; तुगलुक कालीन 'सयुरगान';
मेहिदा की जैन गुफाएं (१९)
चेतन कवि और उनका पिंगल ग्रन्थ; भूपाल-चतुर्विंशति के रचयिता;
कुमुदचंद्र नाम के गुरु और कल्याणमन्दिर के रचयिता (२०)
यशोधर साहित्य; क्या उमास्वाति सातवाहनवंशी थे?; कवि सहणपाल (२१)
सहार का जैन पुरातत्व; आचार्य सोमदेव सम्बन्धी नवीन शिलालेख;
विनयनन्दी नाम के विभिन्न गुरु (२२)
प्रमेयरत्नालंकार के कर्ता चारुकीर्ति; वज्रनन्दि सम्बन्धी एक अभिलेख;
पारनगर का जैन पुरातत्व (२३)
चैत्य-वन्दन स्तोत्र; अलवर जिले में जैन पुरातत्व;
जैन-बौद्ध श्रमण और मांसाहार (२४)
तीर्थंकर का कर्णच्छेदन; केरल का एक प्राचीन जैन केन्द (आलतूर) ;

कमलकीर्ति नाम के गुरु (२५)
तीर्थंकर के जन्मकल्याणक का प्रस्तरांकन; महाभारत की
भारत-स्तुति में ऋषभ; जयसागर नाम के हिन्दी जैन साहित्यकार (२६)
कवि पद्म या पदमु; अमृतचन्द्राचार्य के सम्बन्ध में एक भ्रम;
ग्वालियर की जिनमाता मूर्ति (२७)
कवि आसाराम; धर्मात्मा आचलदेवी; धाराशिव के गुफा मन्दिर (२८)
अरहंत या अरिहंत; जैन विद्या और जर्मन विद्वान;
भक्तामरस्तोत्र की श्लोक संख्या (२९)
प्राचीन जैन केन्द्र कम्बदहल्लि; ज्ञानचिन्तामणि;
आमेर के विद्याव्यसनी भट्टारक नरेन्द्रकीर्ति (३०)
जैन गुफाएं तथा गुफामन्दिर; जैन भित्ति-चित्र;
बल्गेरिया से प्राप्त एक तीर्थंकर कांस्य प्रतिमा (३१)
कोल्लापुरीय माघनन्दि सिद्धान्तदेव; शिलाहार राजे और जैनधर्म;
डिप्टी कालेराय (३२)
अपभ्रंश सुलोचनाचरित्र के कर्ता देवसेन; मथुरा की नैगमेश मूर्तियां
और कृष्ण जन्म; नैनीताल की जैन मूर्ति (३३)
तथाकथित जीवन्तस्वामी प्रतिमा; निर्वाणस्थल पावा;
हस्तिपाल विषयक दिगम्बर उल्लेख (३४)
प्राकृत या नागभाषा; स्वस्तिक; सेठ हीरासाब डोमे (३५)
तथाकथित मल्लिकुमारी मूर्ति; हस्तिनापुर की दो नव प्राप्त मूर्तियां;
मैदामई के जमींदार रामजीतसिंह (३६)
सप्तमुखी-जिन मूर्ति; धर्मघोषसूरि से वाद करने वाले महावादी गुणचन्द्र;
ला० उसेरीलाल नवाबगंज वाले (३७)
गोम्मटेश्वर के चरणों में विविध निर्माण; मेघचन्द्र नाम के विभिन्न गुरु;
टकसालाध्यक्ष अण्णय्य (३८)
तिलोयपण्णति विषयक नाहटा जी की शंका; माल (जि. लखनऊ) का
जैन पुरातत्व; धर्मवीर कांगेय (३९)
आचार्य सिंहकीर्ति का सम्मान करने वाला सुल्तान; भट्टारक सुमतिकीर्ति;
पार्श्व-प्रतिमा की फणावली (४०)

गोम्मटेश सहस्राब्दि; अजितसेन नाम के विभिन्न गुरु;
जिनकांची - महान प्राचीन ज्ञान-केन्द्र (४१)
भगवती दास नाम के विद्वान; 'अर्गलपुर जिन-देवता' की रचना तिथि;
भरावन गांव की प्राचीन पार्श्व प्रतिमा (४२)
अकलंकदेव और हरिभद्रसूरि का पूर्वापर; चरथावल के चौधरी रायमल्ल;
मथुरा से प्राप्त एक अन्य जैन देवी-मूर्ति (वर्ष ५२) (४३)
वैराग्यमणिमाला के रचयिता विशालकीर्ति; क्या हस्तिनापुर में भट्टारक
परम्परा रही है?; भगवान बाहुबली की कुछ विचित्र मूर्तियां (४४)
'उपगूहन' शब्द का ऐतिहासिक महत्व; बाहुबली मूर्तियों के पादमूल में
अंकित स्त्री-युगल; एक विवादास्पद प्रसंग (श्वेताम्बर व दिगम्बर
सम्प्रदायों की उत्पत्ति) (४५)
अभयनन्दि नाम के गुरु; रिद्धपुर गुफा की जिन-मूर्ति;
रेहलीम के जिन-मन्दिर के भित्ति-चित्र (४६)
अयोध्या में प्राप्त प्राचीन जैन मृण्मूर्ति; द्वाराहाट की प्राचीन जैन मूर्ति;
मार्को पोलो द्वारा जैनों का वर्णन (४७)
अभयचन्द्र नाम के गुरु; बरों ग्राम की गुप्तकालीन ऋषभ प्रतिमा;
सम्यक्त्वकौमुदी के सम्बन्ध में (४८)
तथाकथित अशोकस्तंभ अशोक की कृति नहीं है!; जिनेन्द्रकल्याणाभ्युदय
के कर्ता अय्यापाय; जीवंधर साहित्य (४९)
अमरकीर्ति नाम के गुरु एवं ग्रन्थकार; धर्मशर्माभ्युदय के
टीकाकार पं० यशस्कीर्ति; अहिच्छत्रा में लूडर्स द्वारा प्राप्त जैनावशेष (५०)
गुणभद्रीय धन्यकुमार-चरित; पं० जोतीप्रसाद 'प्रेमी' देवबन्दी;
नवप्राप्त अलभ्य तमिल जैन अभिलेख (५१)

घ - डॉ० साहब द्वारा प्रस्तुत अन्य स्तम्भ

शोधसार : सभी अंकों में विभिन्न भारतीय और विदेशी पत्र-पत्रिकाओं में जैन इतिहास से सम्बन्धित जो लेख आदि प्रकाशित होते थे उनके सन्दर्भ से ५३५ **शोधसार** दिये गये।

साहित्य परिचय : अंक २ से उस समय प्रकाशित विविध साहित्य और विशिष्ट पत्र-पत्रिकाओं का परिचय दिया जाता रहा।

शोक संवेदन : समय-समय पर जैन समाज की और विद्वत् क्षेत्र की जो विभूतियां दिवंगत हुईं उनका परिचय शोक संवेदन के रूप में दिया जाता रहा।

सम्पादकीय वक्तव्य के रूप में, अपने संकोची और निरभिमानी स्वभाव के कारण, केवल अंक १, १०, २० और ५० में ही उन्होंने **आत्म निवेदन** स्वरूप सम्पादकीय टिप्पणी दी जिसका आशय सभी विद्वान लेखकों और प्रबुद्ध पाठकों के प्रति आभार व्यक्त करना था।

च - जैनेतर एवं जैन विद्वानों के शोधपरक आलेख एवं अन्य रचनाएं

शोधांक के माध्यम से डॉ० साहब ने विभिन्न जैनेतर और जैन विद्वानों को तथा युवक शोधार्थियों को जैन विद्या के सम्बन्ध में शोधपरक लेखन के लिए भी प्रेरित और प्रोत्साहित किया। १०१ लेखकों के लेख और रचनाएं इन अंकों में प्रकाशित हुईं। उक्त लेखकों का अकारादि-क्रम से नामोल्लेख किया जाना अभीष्ट है, यथा -

श्री अगरचंद नाहटा, (डॉ०) अनुपम जैन, पं. अनूपचंद न्यायतीर्थ, श्री अभय कुमार जैन, (डॉ०) अमर सिंह, पं. अमृतलाल साहित्याचार्य, (ब्र.) आदि सागर, श्री आर. सेनगुप्ता, (डॉ०) इन्दु राय, श्री इन्द्रसेन जैन सर्राफ, (डॉ०) ऊषा अग्रवाल, (डॉ०) ए.एन. उपाध्ये, (डॉ०) एम.ए. ढाकी, (डॉ०) एम. वसंतराज, श्री एसचिन लिप्पे, श्री कपूरचंद नरपत्येला, श्री कमल कुमार जैन, (डॉ०) कस्तूरचंद कासलीवाल, श्री कस्तूरचंद सुमन, (डॉ०) कस्तूरमल बांठिया, (डॉ०) कंचनलता सब्बरवाल, श्री काशीनाथ गोपाल गोरे, कु. कुमुद श्रीवास्तव, श्री के.पी. पद्मनाभन टम्पी, पं. के. भुजबलि शास्त्री, पं. कैलाशचंद्र शास्त्री, कोठारी कांतिलाल नानालाल, प्रो. कृष्ण दत्त बाजपेई, कु. कृष्णा बाजपेई, प्रो. खुशालचंद गोरावाला, श्री गणेश प्रसाद जैन, (डॉ०) गदाधर सिंह, (डॉ०) गुलाबचंद चौधरी, (मुनि) गुलाबचंद निर्मोही, (डॉ०) गोकुलचंद जैन साहित्याचार्य, पं. गोपीलाल 'अमर', पं. चन्दनलाल शास्त्री, श्री चम्पालाल सिंघई पुरन्दर, पं. जगन्मोहनलाल शास्त्री, श्री जी.सी.आचार्य, (डॉ०) दरबारीलाल कोठिया, श्री दलसुख मालवणिया, श्री दिगम्बर दास जैन, (डॉ०) दिनेशचंद्र अग्रवाल, श्री दीनबन्धु पाण्डे, लाला दीपचंद जैन खजांची, पं. नानक चंद जैन, श्री नीरज जैन, श्री पन्नालाल जैन अग्रवाल, पं. पन्नालाल साहित्याचार्य, पं. परमानन्द शास्त्री, श्री पुष्पराज जैन, श्री पी. के. अग्रवाल, (डॉ०) प्रद्युम्न कुमार जैन, कु० प्रियम्वदा जैन, (डॉ०) प्रेम सागर जैन, पं. फूलचंद सिद्धान्तशास्त्री, (डॉ०) बी.के.

खड़बड़ी, श्री भंवरलाल नाहटा, पं. भंवरलाल पोल्यांका, श्री भगवान दास जौहरी, (डॉ०) भागचंद जैन 'भागेन्दु', कु. मधु जैन, श्री महताबचंद जैन एडवोकेट, (डॉ०) महेन्द्र कुमार न्यायाचार्य, पं. मिलापचंद कटारिया, पं. मूलचंद शास्त्री, पं. रतनलाल कटारिया, श्री रमा कान्त जैन, (डॉ०) रमेशचंद्र शर्मा, कु. रश्मि गुप्ता, श्री राकेश तिवारी, (डॉ०) राजाराम जैन, श्री रामकृष्ण पुरोहित, पं. रामदत्त सांकृत्य, श्री रामसेवक गर्ग, महापंडित राहुल सांकृत्यायन, श्री लक्ष्मीचंद जैन, श्री लक्ष्मीनारायण जैन, पं. वंशीधर शास्त्री, (डॉ०) वासुदेव शरण अग्रवाल, श्री विजय प्रेम, श्री विनयचंद पापड़ीवाल, पं. विमल कुमार जैन सोरैया, श्री वी.एन.श्रीवास्तव, (डॉ०) वी.सी. जैन, श्री शरद कुमार साधक, (डॉ०) शशि कान्त, (क्षु०) शीतल सागर, (डॉ०) शैलेन्द्र रस्तोगी, पं. श्री नारायण शास्त्री, (डॉ०) संकटा प्रसाद शुक्ल, श्री सतीशचंद्र जैन 'कुमरेश', श्री सलेखचंद्र जैन, कु० सविता जैन, (क्षु०) सिद्धसागर, (ब्र०) सूरजमल जैन, कु० सोनिया मित्तल, श्री सोहनलाल यादव, (क्षु०) हीरालाल सिद्धान्तशास्त्री, और (डॉ०) हीरालाल जैन।

आभार

यह एक सुखद संयोग है कि श्री ताराचंद 'प्रेमी' ने **श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ, मथुरा,** का एक विवरणात्मक इतिहास निबद्ध करने के लिए श्री कुन्दकुन्द महाविद्यालय, खतौली, के डॉ. कपूरचंद जैन और उनकी सहधर्मिणी डॉ. ज्योति जैन से आग्रह किया। इन विद्वान दम्पति ने विभिन्न स्रोतों से पर्याप्त परिश्रमपूर्वक काफी सामग्री एकत्रित और संयोजित की है। यह विस्मय की बात है कि **जैन सन्देश** का **रजत जयन्ती विशेषांक** और **जैन सन्देश शोधांक** के अंक उन्हें संघ के कार्यालय और पुस्तकालय में उपलब्ध नहीं हो सके। उन्होंने अपनी समस्या का उल्लेख हमसे किया और यह आग्रह भी किया कि यदि हमारे संग्रह में यह सामग्री उपलब्ध हो तो इसका एक विवरणात्मक आलेख तैयार करके हम उन्हें उपलब्ध करा दें। पिताजी डॉ० ज्योति प्रसाद जैन से विरासत में प्राप्त संग्रह में तलाश करने पर यह सामग्री हमें अनुज रमा कान्त के सहयोग से प्राप्त हो सकी। उसके आधार से **जैन संघ** की स्थापना, **जैन सन्देश** के प्रकाशन और **जैन सन्देश शोधांकों** में प्रकाशित शोध गर्भित विविध सामग्री का समाकलन प्रस्तुत करने का प्रयास हमने किया है। **शोधांकों** में जो बहुमूल्य सामग्री प्रकाशित हुई थी, उसको प्रस्तुत करने का जो यह संयोग बना उसके लिए मैं डॉ० कपूरचंद और डॉ० ज्योति को साधुवाद देता हूं। वे अपने द्वारा

प्रणीत किये जा रहे **श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ के इतिहास** में इसे सम्मिलित करेंगे और इस प्रकार इतिहास-मनीषी विधावारिधि डॉ० ज्योति प्रसाद जैन द्वारा जैन विद्या के प्रति किये गये महती अवदान को स्थायित्व प्राप्त हो सकेगा। इस योजना के संयोजक श्री ताराचंद 'प्रेमी' के प्रति भी मैं अपना आभार व्यक्त करता हूं।

{यह आलेख २७-२-२००७ को डॉ० कपूरचन्द जैन को भेज दिया गया था। इस बीच पं. नाथूलाल शास्त्री का निधन हो गया है और **शोधादर्श** का भी यह ६४वां अंक है, तदनुसार आलेख को संशोधित कर दिया गया है।

श्री रमा कान्त जैन के शोधांक में प्रकाशित लेखों का विवरण भी उपादेय होगा-

१. गोम्मटेश्वर बाहुबलि (मूर्ति शिल्प)	अंक	२५
२. चिन्तामणि		२७
३. प्राचीन तमिल कवियित्री 'ओवै'		२६
४. मित्रलाभ की कथा और नरीविरुत्तम		३०
५. कण्णकी		३४
६. नालडियार		३५
७. तेलुगु साहित्य में जैनों का योगदान		३६
८. रीतिकालीन कवि भूधरदास		४०
६. अध्यात्म-रसिक कविवर भगवतीदास		४१
१०. कलाधाम कलुगुमलै		४३
११. शिलप्पदिकारम् से प्राप्त कुछ उल्लेखनीय तत्व		४४
१२. गोम्मटेश्वर बाहुबलि (डाक टिकट)		४५
१३. दक्षिण भारत तथा एक जैन महातीर्थ 'कोपण'		४६
१४. कोपण से प्राप्त अभिलेख		४७, ४६
१५. तमिल जैन पुराण		४८
१६. तमिलनाडु की प्राचीन गुफायें		५०
१७. कवि कमलनयन		५१ }

– ज्योति निकुज, चारबाग, लखनऊ

कवि भागचन्द्र और उनका महावीराष्टक स्तोत्र

ग्वालियर (मध्यप्रदेश) के अन्तर्गत ईसागढ़ में जन्मे ओसवाल जातीय दिगम्बर जैन मतानुयायी कवि भागचन्द्र उन्नीसवीं शती ईस्वी में हुए जैन पण्डितों में गण्यमान्य स्थान रखते हैं। संस्कृत और प्राकृत भाषाओं के ज्ञाता भागचन्द्र जी को हिन्दी पर भी असाधारण अधिकार था। उन्होंने अनेक पदों और स्तुतियों की रचना की जो रस और अनुभूति से परिपूर्ण हैं और सरल भाषा में निबद्ध हैं। उन्हें **अमितगति श्रावकाचार, उपदेश सिद्धान्तरत्न माला, प्रमाणपरीक्षा, नेमिनाथपुराण** और **ज्ञानसूर्योदय** नाटक की वचनिकाएं लिखने का श्रेय है। संस्कृत में उन्होंने **महावीराष्टक स्तोत्र** की रचना की थी। भगवान महावीर स्वामी की भावभीनी स्तुति में ६ 'शिखरिणी' छन्दों में निबद्ध यह स्तोत्र इतना लोकप्रिय हुआ कि यह आज भी अनगिनत भक्तों को कण्ठस्थ है और अधिकांश इसका नित्यपाठ करते हैं। इसका हिन्दी आदि अन्य भाषाओं में अनुवाद भी हुआ। स्तोत्र के अन्तिम श्लोक में रचनाकार ने अपना कवि नाम 'भागेन्दु' अर्थात् भागचन्द्र उल्लिखित किया है और यह विश्वास व्यक्त किया है कि भक्तिपूर्वक रचित इस **'महावीराष्टक स्तोत्र'** को जो पढ़ेगा या सुनेगा वह परमगति को प्राप्त होगा। यह कालजयी स्तोत्र यहाँ मूलरूप में श्री प्रकाशचन्द्र जैन 'दास' के हिन्दी पद्यानुवाद तथा डॉ. विदुषी भारद्वाज के आलेख "जैन दर्शन के आलोक में **'महावीराष्टक स्तोत्रम्'** के साथ प्रस्तुत है।

– रमा कान्त जैन

महावीराष्टक स्तोत्र

(कविवर भागचन्द्र)

शिखरिणी

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः
समं भान्ति ध्रौव्य-व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिताः।
जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन-परो भानुरिव यो
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।१।।

अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्द-रहितं
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरम।।

स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।२।।

नमन्नाकेन्द्राली-मुकुट-मणि-भा-जाल-जटिलं
लसत्पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनुभृताम्।
भवज्ज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।३।।

यदर्चाभावेन प्रमुदित-मना दर्दुर इह
क्षणादासीत्स्वर्गी गुण-गण समृद्धः सुख-निधिः।
लभन्ते सदभक्ताः शिव-सुख-समाजं किमु तदा
महावीरस्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।४।।

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत-तनुर्ज्ञान-निवहो
विचित्रात्माप्येको नृपति-वर-सिद्धार्थ-तनयः।
अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोद्भुत-गतिः
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।५।।

यदीया वाग्गङ्गा विविध-नय-कल्लोल-विमला
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति।
इदानीमप्येषा बुध-जन-मरालैः परिचिता
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।६।।

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवन-जयी काम-सुभटः
कुमारावस्थायामपि निज-बलाद्येन विजितः।
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशम-पद-राज्याय स जिनः
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।७।।

महामोहातङ्क-प्रशमन-पराकस्मिक-भिषग्
निरापेक्षो बन्धुर्विदित-महिमामङ्गलकरः
शरण्यः साधूनां भव-भयभृतामुत्तमगुणो
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।८।।

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या 'भागेन्दुना' कृतम्।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम्।।९।।

महावीराष्टक स्तोत्र

(हिन्दी पद्यानुवाद)

तर्ज- छन्द (तुम तरन तारन)

- श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'

(१)

चेतन अचेतन ज्ञात हो कर, मुकुर सम जिनके सदा।
ध्रौव्य, व्यय, उत्पाद अवस्था, युक्त झलके सर्वदा।।
जगत साक्षी मार्ग वे, रवि सम प्रकट करते रहें।
महावीर स्वामी नयन पथ, गामी मेरे बनते रहें।।

(२)

युग नयन सरसिज लालिमा, स्पन्दन रहित भी व्यक्त हैं।
जन-जन को करते बाह्य अन्तर क्रोध क्षय स्थिति प्रकट है।
स्पष्ट शान्ति युक्त मुद्रा, अति विमल धरते रहें।।
महावीर स्वामी नयन पथ, गामी मेरे बनते रहें।।

(३)

नत शीष इन्द्रों के मुकुट, मणियों की आभा जो धरे।
शोभित हुए युग पद कमल, तन धारियों के दुख हरें।।
जल सम भवाग्नि स्मरण से, भी शान्त वे करते रहें।।
महावीर स्वामी नयन पथ, गामी मेरे बनते रहें।।

(४)

जिनके अर्चन भाव से, दर्दुर हुआ प्रमुदित मना।
क्षण मात्र में पा स्वर्ग, गुण गण युक्त सुख निधि सुर बना।।
आश्चर्य क्या यदि भक्त गण, सुख मोक्ष का वरते रहें।
महावीर स्वामी नयन पथ, गामी मेरे बनते रहें।।

(५)

तप्त स्वर्ण से कान्ति युत, तन रहित ज्ञान निधान हैं।
विचित्र एक अनेक, सिद्धारथ पुत्र भी श्रीमान हैं।।

अज, विगत भवराग, भी, अद्भुत गति धरते रहें।
महावीर स्वामी नयन पथ, गामी मेरे बनते रहें।।

(६)

जिन की वाणी जाह्नवी, बहु नय कल्लोल से निर्मला।
सद्ज्ञान जल में स्नान से, करती है हर जन का भला।।
बुद्ध मनुज मराल उस में, आज भी तरते रहें।
महावीर स्वामी नयन पथ, गामी मेरे बनते रहें।।

(७)

दुर्निवार मदन सुभट, जिसने जीत सारा जग लिया।
युवा अवस्था में ही उसको, विजित निज बल से किया।।
शिव राज्य नित्यानन्द में, जिनवर सदा रमते रहें।
महावीर स्वामी नयन पथ, गामी मेरे बनते रहें।।

(८)

मोह महा व्याधि शमन, निःस्वार्थ वैद्य महान हैं।
कल्याण कर निष्काम बन्धु, ज्ञात महिमा वान हैं।।
उत्तम गुणी उन की शरण, भव भीत मुनि पड़ते रहें।
महावीर स्वामी नयन पथ, गामी मेरे बनते रहें।।

उपसंहार

भागेन्दु कृत महावीर अष्टक, स्तोत्र भक्ति भाव से।
जो पढ़ेगा या सुनेगा 'दास' इस को चाव से।।
सद्भावना से वह मनुज उत्तम गति को पायेगा।
अनुवाद यह पढ़ने से भी, जीवन सफल हो जायेगा।

जैन दर्शन के आलोक में 'महावीराष्टक स्तोत्रम्'

- डॉ. विदुषी भारद्वाज

जैन मतावलम्बी महाकवि भागेन्दु द्वारा रचित **'महावीराष्टक स्तोत्रम्'** संस्कृत साहित्य का ऐसा अनुपम स्तोत्र है जिसमें एक ओर भगवान महावीर की भक्ति की यमुना बह रही है तो दूसरी ओर ज्ञान की गंगा। साहित्यिक सौन्दर्य की सरस्वती ने इसमें मिलकर ऐसा दिव्य तीर्थ रच दिया है जिसमें स्नान करने से मानव की लौकिक और आध्यात्मिक समस्त मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।

भगवान महावीर चौबीसवें तीर्थंकर हैं। उन्होंने बारह वर्ष की कठोर तपस्या के पश्चात् कैवल्य प्राप्त किया था। कैवल्य ज्ञान वह पूर्ण ज्ञान है जिसकी प्राप्ति के पश्चात् प्राणी को यह समस्त जड़-चेतनमय संसार दर्पण में प्रतिबिम्बित वस्तु के समान भासता है। वस्तुतः इस संसार में दो प्रकार के पदार्थ हैं- चेतन और अचेतन। अचेतन अथवा जड़ पदार्थ पांच हैं-पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। चेतन और अचेतन दोनों अपनी जाति कभी नहीं छोड़ते, किन्तु अंतरंग एवं बहिरंग कारणों से इनमें परिवर्तन दिखाई पड़ता है। प्रतिपल नवीन अवस्था की प्रतीति उत्पाद कहलाती है जैसे मिट्टी से घड़ा बनाना। पूर्व अवस्था का त्याग व्यय कहलाता है जैसे घड़ा बनने पर मिट्टी के पिण्ड का त्याग। अनादिकालीन स्वभाव, जिसका न व्यय होता है, न उदय, वह ध्रुव का भाव या ध्रौव्य कहलाता है जैसे मिट्टी, जो मिट्टी से घड़ा बनने तक की प्रक्रिया में सर्वत्र रहती है। व्यक्ति को जब तक पूर्ण ज्ञान नहीं होता तब तक उसे जड़चेतनमय संसार अपने वास्तविक रूप में नहीं भासता। जब उसे कैवल्य ज्ञान की प्राप्ति होती है तब उसे यह जड़चेतनमय संसार इसी प्रकार यथार्थ रूप में भासता है जैसे दर्पण के सम्मुख रखी वस्तु दर्पण में भासती है। इस प्रकार कैवल्य ज्ञान वह निर्मल दर्पण है जिसमें वस्तु यथार्थ रूप में प्रतिबिम्बित होती है। **महाराष्टक स्तोत्रम** के प्रथम छन्द में महाकवि भागेन्दु भगवान के इसी कैवल्य ज्ञान के विषय में कहते हैं- "यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः, समं भान्ति ध्रौव्य व्ययजनिल संतोऽन्तरहिताः" अर्थात् जिनके चैतन्य या केवल ज्ञान में ध्रौव्य, व्यय और उत्पत्ति से युक्त अनन्त चेतन और अचेतन पदार्थ दर्पण में प्रतिबिम्बित वस्तु के समान एक साथ दृष्टिगोचर होते हैं ऐसे श्री महावीर भगवान मेरे नयनपथगामी हों। दार्शनिक दृष्टि से यह प्रतिबिम्बवाद कहा जाता है।

इसके अनन्तर कवि कहते हैं, "जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटन परो भानुरिव यो" अर्थात् जो महावीर भगवान सूर्य के समान साक्षी मार्ग का प्रकटन करने वाले हैं अर्थात् जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश में मार्ग स्पष्ट दिखायी देते हैं, उसी प्रकार भगवान साक्षी मार्ग को प्रकट करने वाले हैं। तात्पर्य यह है कि उनके कैवल्य ज्ञान से प्राणी साक्षी भाव प्राप्त कर लेता है, इस ज्ञान की उपलब्धि के पश्चात् मनुष्य भोक्ता नहीं वरन् दृष्टा अथवा साक्षी के समान इस संसार में रहता है। जिस प्रकार निर्मल दर्पण में वस्तुएं यथावत रूप में मात्र दृष्टिगोचर होती हैं दर्पण पर उनकी कोई खरोंच या लकीर नहीं पड़ती, दृश्यमान चाहे भयंकर हो अथवा सौम्य। उसी प्रकार कैवल्य ज्ञानी संसार की किसी बात से लिप्त नहीं होता। वह उसका मात्र दृष्टा रहता है, भोक्ता नहीं। भगवान महावीर बारह वर्षों की कठोर तपश्चर्या के पश्चात् सूर्य के समान प्रकाशवान कैवल्य ज्ञान को प्राप्त कर साक्षी भाव से संसार में रहे।

'महावीराष्टक स्तोत्रम्' के छठे छन्द में कवि कहते हैं, 'यदीया वाग्गंगा विविध नयकल्लोलविमला, बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति' अर्थात् जिनकी दिव्य वाणी रूपी गंगा नदी अनेक प्रकार की नय दृष्टि रूपी तरंगों से उज्ज्वल है तथा जो संसार में जनसमूह को महान ज्ञान रूपी जल से स्नान कराती है अर्थात् जिस प्रकार गंगा नदी में अनन्त लहरे हैं उसी प्रकार भगवान महावीर की वाणी गंगा अनेक नय रूपी तरंगों से तरंगायित है। वस्तुतः प्रत्येक वस्तु अनेकधर्मा होती है। इन अनेक धर्मों को साधारण मानव नहीं जान सकता। उसे वस्तु का आंशिक या सापेक्ष ज्ञान ही प्राप्त होता है। अतः वह आंशिक ज्ञान के आधार पर यह नहीं कह सकता कि वस्तु ऐसी ही है। इसके स्थान पर 'वस्तु ऐसी है' ऐसा कहने पर इसमें वस्तु के विषय में वक्ता द्वारा ज्ञात धर्म तो आ ही जाते हैं, वक्ता द्वारा अज्ञात धर्मों का भी समावेश हो जाता है। ऐसा कथन जैन दर्शन में नय की कोटि में आता है। अतः 'स्याद् वस्तु ऐसी है' कहने का सिद्धान्त प्रचलन में आया जिसे स्याद्वाद कहते हैं। इसके अनुसार वस्तु विषयक इस प्रकार का कथन ही प्रामाणिक माना जाता है। प्रत्येक वस्तु एकान्तिक नहीं वरन् अनेकान्त होती है। महाकवि भागेन्दु कहते हैं कि महावीर जी की वाणी रूपी गंगा नय रूपी विविध लहरों से युक्त है तथा संसार में जनसमूह को महान ज्ञान रूपी जल से स्नान कराती है। अर्थात् जिस प्रकार गंगा में स्नान करने से मनुष्यों का तन तो निर्मल होता ही है मन भी पावन होता है, गंगा जीवों का उद्धार भी करती है। भगवान महावीर द्वारा उपदिष्ट धर्म के दस लक्षण (उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम

आर्जव, उत्तम शौच, उत्तम सत्य, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम आकिंचन्य और उत्तम ब्रह्मचर्य) तथा ज्ञान (मति ज्ञान, श्रुति ज्ञान, अवधि ज्ञान, मनस्पर्याय ज्ञान तथा कैवल्य ज्ञान) से युक्त महान् ज्ञानमयी वाणी रूपी गंगा में स्नान करने से संसार के जनसमूह सांसारिक तापों से तो मुक्ति पाते ही हैं, साथ ही आध्यात्मिक आनन्द भी प्राप्त करते हैं। उनकी वाणी रूपी गंगा-जल के पान से मोक्ष की प्राप्ति होती है। जिस प्रकार अक्षय प्रवाह गंगा आज भी बह रही है उसी प्रकार आज के समय में भी भगावन महावीर की वाणी गंगा विद्वान मनुष्यों रूपी हंसों की परिचिता है। "इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता" अर्थात् नीरक्षीर विवेकी हंसों के समान विवेकी विद्वान आज भी भगवान महावीर की वाणी से परीचित हैं।

महावीराष्टक स्तोत्रम के सातवें छन्द में महाकवि ने नित्य आनन्दमयी मोक्ष रूपी साम्राज्य की प्राप्ति के लिए जितेन्द्रिय श्री भगवान महावीर से अपने नयनपथगामी होने की प्रार्थना की है, "स्फुरन्नित्यानन्द प्रशमपदराज्याय स जिनः।" जैन दर्शन में जीव के दो अंश माने गये हैं- आत्म तत्व और भौतिक तत्व। भौतिक तत्त्व से आवृत्त आत्म तत्व ही जीव की संज्ञा पाता है। इस भौतिक अंश के विनाश का नाम ही मोक्ष है। यह मोक्ष कर्म-बन्धन से मुक्त होकर ही प्राप्त हो सकता है। यह मोक्ष ही समस्त भारतीय धर्म एवं दर्शनों के अनुसार जीव का चरम लक्ष्य है।

इस प्रकार भगवान महावीर के कैवल्य ज्ञान से प्रारंभ इस **'महावीराष्टक स्तोत्रम्'** में महाकवि भागेन्दु ने श्री भगवान महावीर की स्तुति से नित्यानन्दमय मोक्ष की प्राप्ति सुलभ बतायी है। उपरोक्त विवेचन डॉ. रमेशचन्द्र जैन की व्याख्या के आधार पर किया गया है।

महान एवं गूढ़ दार्शनिक तत्वों को स्वयं में समाहित किये हुए यह संक्षिप्त स्तोत्र जैन काव्य परम्परा ही नहीं अपितु संस्कृत काव्य परम्परा का एक उज्जवल रत्न है। इसका धर्म, दर्शन, भक्ति एवं साहित्य की दृष्टि से बहुविध महत्व है।

- रीडर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग
रानी भाग्यवती देवी महिला महाविद्यालय, बिजनौर

....

अपरिग्रह : अनुत्तरौपपातिक सूत्र के सन्दर्भ में

- साध्वी प्रवीण कुमारी 'प्रीति'

अपरिग्रह का लक्षण एवं परिभाषा-

परिग्रह शब्द 'परि' उपसर्ग पूर्वक 'ग्रह' धातु में 'घञ्' प्रत्यय लगने पर बना है जिसका अर्थ है- पकड़ना, थामना, लेना, धारण करना, ग्रहण करना, प्राप्त करना, स्वीकार करना, परिवार, अनुचर, नौकर आदि।[1] निरूक्त में परिग्रह के विषय में कहा है- "जिसको स्वीकार किया जाता हे, वह परिग्रह है।"[2] परिग्रह का विपरीत अपरिग्रह है।

वाचस्पत्यम (खण्ड १, पृ. २३४) के अनुसार देह यात्रा के निर्वाह के अतिरिक्त भोग के साधनों और धनादि का अस्वीकार अपरिग्रह है। **आवश्यक निर्युक्ति** (२, पृ. ६३) में केवल स्वीकार को परिग्रह नहीं बताया है किन्तु साधु की मर्यादा का अतिक्रमण कर वस्तु के ग्रहण करने को भी परिग्रह के अन्तर्गत ग्रहण किया है। पूज्यपाद देवनन्दि (४६४-५२५ ई.) की **सर्वार्थसिद्धि** (४/२१/२५२/५) के अनुसार कषाय के उदय से विषयों का संग परिग्रह है। अपरिग्रह व्रत को संग-विमुक्ति भी कहा है। **तत्त्वार्थ सूत्र** (७/१७) में उमास्वामि ने कहा है 'मूर्च्छा परिग्रह है'। **सर्वार्थसिद्धि** में पुनः कहा है 'यह वस्तु मेरी है, इस प्रकार का संकल्प रखना परिग्रह है,'। अकलंकदेव (६२५-६७५ ई.) ने **तत्त्वार्थ राजवार्तिक** (६/१५/३/५२५/२७) में लिखा है 'यह मेरा है, मैं इसका स्वामी हूँ' इस प्रकार ममत्व परिणाम परिग्रह है। **सर्वार्थसिद्धि** में पुनः कहा गया है 'जहां इच्छा है वहीं परिग्रह है।' इस प्रकार अपरिग्रह और परिग्रह का वस्तु के अस्वीकार और स्वीकार के साथ सम्बन्ध है।

अपरिग्रह के भेद-

दशवैकालिक सूत्र (१/३, ३/१, ४/१५) के अनुसार परिग्रह के दो भेद हैं- बाह्य परिग्रह और आभ्यन्तर परिग्रह। निर्ग्रन्थ साधु को बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह से मुक्त होना चाहिए। बाह्य परिग्रह से रहित साधु संयम में स्थिर रहता है। सचित-अचित, विद्यमान-अविद्यमान, स्वाधीन या अस्वाधीन पदार्थों के प्रति मूर्च्छाभाव को परिग्रह कहते हैं। धन, धान्य, क्षेत्र, वस्तु, हिरण्य (सोना-चांदी) दास-दासी, द्विपद

(सेना तथा कार्यकर्त्तागण), चतुष्पद (हाथी, घोड़े, गाय, बैल) आदि बाह्य परिग्रह हैं। चार कषाय (क्रोध, मान, माया, लोभ), नव नो कषाय और मिथ्यात्व आभ्यन्तर परिग्रह हैं। **स्थानांग सूत्र** में परिग्रह तीन प्रकार का बतलाया गया है- १. कर्म परिग्रह, २. शरीर परिग्रह, ३. वस्त्र पात्र बाह्य परिग्रह अथवा सचित, अचित और मिश्र परिग्रह। मुमुक्षु तो अपने शरीर पर ममता को भी परिग्रह मानता है। **भगवती आराधना** और **मूलाचार** में भी बाह्य परिग्रह के दस प्रकार उल्लिखित हैं। **उत्तराध्ययन निर्युक्ति** के अनुसार आभ्यतर परिग्रह चौदह प्रकार का होता है- क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, मिथ्यात्व, वेद, अरति, रति, हास्य, शोक, जुगुप्सा और भय।

आगमों में अपरिग्रह का स्वरूप-

आचारांग सूत्र (२/३) में परिग्रह के विषय में कहा है- "परिग्रह में आसक्त हुआ मनुष्य द्विपद और चतुष्पद का परिग्रह करके उनका उपयोग करता है। उनको कार्य में नियुक्त करता है। फिर धन का संग्रह-संचय करता है। अपने, दूसरों के और दोनों के सम्मिलित प्रयत्नों से उसके पास अल्प या बहुत मात्रा में धन संग्रह हो जाता है। वह उस अर्थ में गृह-आसक्त हो जाता है और भोग के लिए उसका संरक्षण करता है। पश्चात् वह विविध प्रकार से भोगोपभोग करने के बाद बची हुई विपुल अर्थ-सम्पदा से महान उपकरण वाला बन जाता है। वह सुख की इच्छा से धन का संग्रह करता है किन्तु धन से कभी सुख नहीं मिलता। अन्त में उसके हाथ दुःख, शोक, चिन्ता और क्लेश ही लगता है। यदि परिग्रहासक्त व्यक्ति दीक्षा ले तो भी जब तक उस बंधन से पूर्णतया मुक्त नहीं हो जाता वह केवलज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता और न ही संसार से परि-निर्वाण प्राप्त कर सकता है।" उक्त सूत्र (५/२) में यह भी कहा है कि "इस जगत् में जितने भी परिग्रहवान् प्राणी हैं वे इन वस्तुओं में ममता-मूर्च्छा रखने के कारण ही परिग्रहवान् हैं। यह परिग्रह ही परिग्रहियों के लिए महाभय का कारण होता है।"

'**सूत्रकृतांग सूत्र** में परिग्रह के विषय में कहा गया है "सांसारिक पदार्थों और स्वजन वर्ग का परिग्रह इस लोक में दुःख को उत्पन्न कराने वाला है तथा वह विध्वंस विनश्वर स्वभाव वाला है। परिग्रहीत सजीव-निर्जीव सभी पदार्थ नाशवान् हैं, यह जानकर कौन पुरुष परिग्रह के भण्डार गृहस्थावास में रह सकता है ? अर्थात् परिग्रह का आधार गृहस्थावास त्याज्य ही है।"

समवायांग सूत्र (२/१) की शिक्षा है कि साधु आरम्भ और परिग्रह इन दो स्थानों को ज्ञपरिज्ञा से जानकर और प्रत्याख्यान परिज्ञा से त्यागकर आत्मा केवली

प्रज्ञप्त धर्म को सुन पाता है-आरम्भ पापकारी क्रिया और परिग्रह-इन दो स्थानों को जानकर और त्याग कर आत्म विशुद्ध बोधि का अनुभव करता है। साधु परिग्रह का त्याग तीन करण तीन योग से करता है और श्रावक दो करण और तीन योग से परिग्रह का त्याग करता है। साधु सम्पूर्ण परिग्रह का त्याग करता है और श्रावक स्थूल परिग्रह का त्याग करता है।

ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र (१३/३२) में वर्णन है कि मेंढक ने हाथी के पैर के नीचे कुचलकर कमजोर होने पर स्थूल परिग्रह का प्रत्याख्यान किया था।

उपासकदशांग सूत्र (११३) में वर्णन है कि आनन्द श्रावक भगवान् महावीर स्वामी से कहने लगे "भगवन्! मैं मुण्डित होकर गृहस्थ जीवन का परित्याग कर अनगार धर्म में प्रव्रजित होने में असमर्थ हूँ इसलिए आपके पास पांच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत मूलक बारह प्रकार का गृहीधर्म-श्रावक धर्म ग्रहण करना चाहता हूँ।"

प्रश्न व्याकरण (५/९४) में परिग्रह के तीस नाम बतलाये गये हैं जो आसक्ति और संचय दोनों का प्रतिनिधित्व करते हैं, यथा-

१. **परिग्रह**- शरीर, धन, धान्य आदि बाह्य पदार्थों को ममत्वभाव से ग्रहण करना।

२. **संचय**- किसी भी वस्तु को अधिक मात्रा में ग्रहण करना।

३. **चय**- वस्तुओं को जुटाना एकत्र करना।

४. **उपचय**- प्राप्त पदार्थों की वृद्धि करना बढ़ाते जाना।

५. **निधान**- धन को भूमि में गाड़ कर रखना, तिजोरी में रखना, दबाकर रख लेना।

६. **सम्भार**- धान्य आदि वस्तुओं को अधिक मात्रा में भर कर रखना।

७. **संकर**- संकर का सामान्य अर्थ है मिलावट करना।

८. **आदर**- पर पदार्थों में आदर बुद्धि रखना, शरीर, धन आदि को अत्यन्त प्रीतिभाव से संभालना- संवारना।

९. **पिण्ड**- किसी पदार्थ का या विभिन्न पदार्थों का ढेर करना, उन्हें लालच से प्रेरित होकर एकत्रित करना।

१०. **द्रव्यसार**- द्रव्य अर्थात् धन को ही सारभूत समझना।

११. **महेच्छा**- असीम इच्छा या असीम इच्छा का कारण।

१२. **प्रतिबन्ध**- किसी पदार्थ के साथ बंध जाना, जकड़ जाना।

१३. **लोभात्मा**- लोभ का स्वभाव, लोभ रूप मनोवृत्ति।

१४. **महाद्दिका**- याचना।

१५. **उपकरण**- जीवनोपयोगी साधन-सामग्री।

१६. **संरक्षण**- प्राप्त पदार्थों का आसक्ति पूर्वक संरक्षण करना।

१७. **भार**- परिग्रह जीवन के लिए सारभूत है।

१८. **संपातोत्पादक**- नाना प्रकार के संकल्पों-विकल्पों का उत्पादक अनेक अनर्थों एवं उपद्रवों का जनक।

१९. **कलिक रण्ड**- कलह का पिटारा (परिग्रह कलह, युद्ध, वैर, विरोध, संघर्ष आदि का प्रमुख कारण है, इसे कलह का पिटारा नाम दिया गया है।)

२०. **प्रविस्तार**- धन-धान्य आदि का विस्तार।

२१. **अनर्थ**- परिग्रह नानाविध अनर्थों का प्रधान कारण है।

२२. **संस्तव**- संस्तव का अर्थ है परिचय।

२३. **अगुप्ति या अकीर्ति**- अपनी इच्छाओं या कामनाओं का गोपन न करना।

२४. **आयास**-आयास का अर्थ है- खेद या प्रयास। परिग्रह जुटाने के लिए मानसिक और शारीरिक प्रयास करना पड़ता है।

२५. **अवियोग**- विभिन्न पदार्थों के रूप में धन, मकान या दुकान आदि के रूप में जो परिग्रह एकत्र किया है।

२६. **अमुक्ति**- मुक्ति अर्थात् निर्लोभता न होना।

२७. **तृष्णा**- अप्राप्त पदार्थों की लालसा और प्राप्त वस्तुओं की वृद्धि की अभिलाषा तृष्णा है। तृष्णा परिग्रह का मूल है।

२८. **अनर्थक**- यहां अनर्थक का अर्थ-निरर्थक है।

२९. **आसक्ति**- ममता मूर्च्छा गृद्धि।

३०. **असन्तोष**- असन्तोष भी अपरिग्रह का एक रूप है। मन में बाह्य पदार्थों के प्रति सन्तुष्टि न होना।

विभिन्न सूत्रों में वर्णित अपरिग्रह के विवेचन से यह तथ्य सामने उभर कर आता है कि परिग्रह का विपरीत भाव अपरिग्रह है। गृहस्थ का गृहस्थ जीवन में संभावित हर प्रकार की भोग-विलास तथा सुख-समृद्धि प्रदान करने वाली सामग्रियों का सर्वथा त्याग ही अपरिग्रह है और इस अपरिग्रह की धारणा को अपनाने वाले वीतराग साधु सन्त एवं महापुरुष ही हैं।

अनुत्तरौपपातिक दशांग सूत्र में अपरिग्रह पर विशेष-

अनुत्तरौपपातिक दशांग सूत्र (३) में तैंतीस कुमारों का श्रमण-धर्म में दीक्षित होने का उल्लेख किया गया है जिन्होंने अपने जीवन में अपरिग्रह की धारणा का सर्वथा अनुगमन किया है। धन्य कुमार की माता भद्रा सार्थवाही ने अपने पुत्र के ज्ञान, विज्ञान, सौन्दर्य एवं तत्त्व ज्ञानादि से सन्तुष्ट होकर उनके भोग-विलास ऐश्वर्यादि के लिए बत्तीस प्रकार के महल बनवाये। उन महलों में एक उत्तम प्रकार का भवन बनवाया जो सैकड़ों स्तम्भों पर आधारित था। तदनन्तर भद्रा सार्थवाहि ने बत्तीस श्रेष्ठी प्रवरों की कन्याओं के साथ धन्नाकुमार का पाणिग्रहण करवाया। इस प्रकार धन्नाकमार अकथनीय, अवर्णनीय सांसारिक सुखों का उपभोग कर रहे थे। उसी काल और उसी समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी काकन्दी नगरी में पधारे। जमालि के समान धन्यकुमार भी साज-सज्जा के साथ निकले। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास धर्म श्रवण करने और हृदय में धारण करने के पूर्व धन्य कुमार सुखों का उपभोग कर रहे थे। महावीर स्वामी के उपदेश ने धन्य कुमार के जीवन पर अपरिग्रह की भावना का अमिट प्रभाव छोड़ दिया। वे उपदेश रूपी वचनामृत से इस प्रकार प्रभावित हुए कि तत्काल ही सम्पूर्ण सांसारिक भोग-विलासों को ठोकर मार कर परिग्रही से अपरिग्रही बन गये। जब वे भिक्षा के लिए नगर में गये तो ऊँच, मध्य और नीच अर्थात् सघन, निर्धन एवं मध्यम घरों में आहार-पानी के लिए अटन करते हुए जहां उचित आहार मिलता था वहीं से ग्रहण करते थे। स्वीकार की हुई एषणा-समिति से युक्त भिक्षा में जहां भोजन मिला वहां पानी नहीं मिला तथा जहां पानी मिला वहां भोजन नहीं मिला। इस पर भी धन्य अनगार कभी दीनता, खेद, क्रोध आदि कलुषता और विषाद अनुभव नहीं करते थे, प्रत्युत निरन्तर समाधि-युक्त होकर, प्राप्त योगों में अभ्यास बढ़ाते हुए और अप्राप्त योगों की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करते हुए जो कुछ भी भिक्षावृत्ति में प्राप्त होता था, उसको ग्रहण करते थे।

इस प्रकार धन्य अनगार अपनी अपरिग्रह धर्म की प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहे और उसी के अनुसार आत्मा को दृढ़ और निश्चय बनाकर संयम-मार्ग में प्रसन्नचित्त होकर विचरते रहे। भिक्षा में उनको जो कुछ भी आहार प्राप्त होता था उसको वे इतनी अनासक्ति से खाते थे कि जैसे एक सर्प सीधा ही वह अपने बिल में घुस जाता है अर्थात् वे भोजन स्वाद लेकर नहीं खाते थे प्रत्युत संयम निर्वाह के लिये शरीर रक्षा ही उनको अभीष्ट थी। उन्होंने शरीर के प्रति ममता-मूर्च्छा का त्याग कर दिया था।

इस प्रकार अपरिग्रह की कसौटी पर चढ़कर धन्ना अनगार का शरीर अत्यन्त कृश हो गया, किन्तु उनकी आत्मा अलौकिक, बलशाली हो गई थी, जिसके कारण उनके मुख का प्रतिदिन बढ़ता हुआ तेज अग्नि के समान दैदीप्यमान हो रहा था।

इसी प्रकार से शेष बत्तीस कुमारों ने भी श्रमण-धर्म को अपनाकर अपरिग्रह की कसौटी पर कसते हुए अपने जीवन को स्वर्ण के समान दैदीप्यमान बनाया और श्रमण परम्परा तथा जैनागमों में अपना उत्कृष्ट स्थान निर्मित किया।

निशीथचूर्णि में मूर्च्छा को तो परिग्रह के अंतर्गत लिया ही है किन्तु राग और द्वेष को भी भाव परिग्रह की कोटि में रखा है।[३] **आचारांग भाष्य** में अपरिग्रह को और अधिक सूक्ष्मता से व्याख्यायित किया गया है। "अर्थ संग्रह, पदार्थ संग्रह प्रत्यक्ष परिग्रह है। किन्तु सूक्ष्म दृष्टि से सम्मान की वांछा भी परिग्रह है। इसी प्रकार आहार आदि सारे पदार्थ आचार्य की देखरेख में होते हैं। अतः यह आहार मैं स्वयं खाऊंगा, दूसरों को नहीं दूंगा-ऐसा ममत्व भाव परिग्रह है।"

अपरिग्रह महाव्रत की पांच भावनाएं-

आचारांग टीका में भावना के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए बताया है- "महाव्रतों के पोषण के लिए ही भावनाएं हैं।"[४] जिस प्रकार शिलाजीत के साथ लोह रसायण की भावना दी जाती है, उस प्रकार महाव्रतों के गुणों में वृद्धि के लिए भावनाएं निर्दिष्ट की गई हैं।

यों तो भावनाएं असंख्य हैं, पांच महाव्रतों में प्रत्येक महाव्रत की पांच-पांच भावनाएं हैं। इस प्रकार अपरिग्रह व्रत की पांच भावनाएं निम्नलखित हैं-

१. मनोज्ञ और अमनोज्ञ शब्द में समभाव अर्थात् श्रोत्रेन्द्रिय रागोपरति
२. मनोज्ञ और अमनोज्ञ रूप में समभाव अर्थात् चक्षुरिन्द्रिय रागोपरति
३. मनोज्ञ और मनोज्ञ गंध में समभाव अर्थात् घ्राणेन्द्रिय रागोपरति
४. मनोज्ञ और अमनोज्ञ रस में समभाव अर्थात् रसनेन्द्रिय रागोपरति
५. मनोज्ञ और अमनोज्ञ स्पर्श में समभाव अर्थात् स्पर्शनेन्द्रिय रागोपरति।

आगमों में वर्णित उपर्युक्त भावनाओं में शब्दतः कहीं-कहीं अंतर अवश्य है, परन्तु अर्थतः प्रायः साम्य है यद्यपि कहीं-कहीं भिन्नता भी है। अहिंसा महाव्रत की भावना के अन्तर्गत **प्रश्नव्याकरण सूत्र** में आलोकित पान भोजन के स्थान पर एषणा समिति का उल्लेख है। इसी प्रकार महाव्रतों की पच्चीस भावनाओं के लिए सुदृढ़ सुरक्षा कवच है। आचार्य महाप्रज्ञ के शब्दों में कहीं तो "भावना के अभ्यास से महाव्रत पकते

हैं। भावना की आंच जितनी गहरी होगी महाव्रत उतने ही अच्छे रूप में पक सकेंगे। जो साधक इन भावनाओं से प्रतिदिन अपने आपको भावित करता है वह महाव्रतों की अस्खलित रूप से आराधना कर सकता है।"

चातुर्याम धर्म एवं महाव्रत-

जैन दर्शन में अपरिग्रह पर बहुत बल दिया गया है। श्वेताम्बर परम्परा में दूसरे तीर्थंकर से लेकर तेइसवें तीर्थंकर तक चातुर्याम धर्म का उपदेश चला। केवल भगवान् ऋषभ और भगवान् महावीर ने पांच महाव्रत धर्म का उपदेश दिया।

जैन परम्परा में मुनि को अनासक्त चेतना के विकास के लिए सचेष्ट किया गया है। जितना-जितना साधक अल्पोपधि वाला होगा, उसके स्वाध्याय की हानि नहीं होगी और संक्लेश भी नहीं होगा। इसलिए भिक्षु साधन भूत पदार्थों की ही याचना करे। वस्तु का प्रचुर मात्रा में लोभ होने पर भी उसका संग्रह न करे। [६]

विभिन्न धर्मों में अपरिग्रह का सामाजिक महत्व-

आचारांग के अनुसार पदार्थ संग्रह प्रत्यक्ष परिग्रह है। सूक्ष्म दृष्टि से सम्मान की वांछा भी परिग्रह है। प्रमत्त व्यक्ति धन से इस लोक और परलोक में त्राण नहीं पाता।

औपनिषदिक ऋषि का निर्देश है कि यह सम्पूर्ण संसार प्रभु द्वारा शासित है। धन किसी का नहीं है इसलिए त्याग पूर्वक भोग करना चाहिए। कहीं भी आसक्त नहीं होना चाहिए। परिग्रह नहीं करना चाहिए।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा, मागृधः कस्यस्वित् धनम्।। (**ईशावास्योपनिषद,** श्लोक १)

यमराज के द्वारा प्रलोभन दिए जाने पर नचिकेत्ता भी आत्म-विज्ञान का वरदान चाहते हुए कहता है- "धन किसी मनुष्य को तृप्ति नहीं दे सकता, अतः वह किसी का नहीं है।"[७]

जितना पेट भरने के लिए आवश्यक है वही व्यक्ति का अपना है। व्यक्ति को उतना ही संग्रह करना चाहिए। जो इससे ज्यादा संग्रह करता है, वह चोर है, दंड का भागी है।[८]

लोभ को पाप का अधिष्ठान बताते हुए भीष्म युधिष्ठिर के प्रश्न के उत्तर में कहते हैं- "एकमात्र लोभ ही पाप का अधिष्ठान है। यह मनुष्य को निगल जाने के लिए बड़ा मत्स्य है। लोभ से ही पाप की प्रवृत्ति होती है। संग्रह महान दोष है। रेशम का कीड़ा अपने दोष-संग्रह के कारण ही बंधन में पड़ता है।"[९]

बौद्धों के **सुत्तनिपात** में भिक्षु के लिए कहा गया है कि भिक्षु अन्न अथवा पान, खाद्य अथवा वस्त्र के मिलने पर उसका संग्रह न करे। उसके न मिलने पर चिंता न करे। भिक्षु परिग्रह में लिप्त न हो।

इस प्रकार वैदिक, बौद्ध एवं जैन-तीनों ही परम्पराओं में आसक्ति के त्याग और असंग्रह को सुख का मार्ग बताया गया है। बौद्ध परम्परा में भी भिक्षु के लिए परिग्रह को अत्यन्त अल्प करने का प्रयत्न किया गया हे। भिक्षु के दस शीलों में एक शील है-जातरूप रजत विरमण। इसके अन्तर्गत भिक्षु के लिए सोना या रजत (चांदी के सिक्के) को ग्रहण करना, करवाना अथवा रखे हुए का उपयोग वर्जित है। नाना प्रकार के रुपयों का व्यवहार करना भी भिक्षु के लिए निषिद्ध माना गया है। अगर कोई ऐसा करता है तो निसग्गिय पाचित्तिय दोष लगता है।[10] इस प्रकार अपरिग्रह के बीज बौद्धदर्शन में बिखरे पड़े हैं।

ऋग्वेद में दान का महत्व इस प्रकार प्रतिपादित किया गया है-अदाता से पूर्ण घृणा करने वाले तथा पुष्टि करने वाले परमेश्वर दान न देना चाहते हुए को भी दान के लिए प्रतिकार, कंजूस वणिक के भी मन को विशेष मृदु (दान देने के लिए) कर दे। अत्रवास् व्यक्ति जो परमेश्वर के प्रसादनार्थ याचना करने वाले का पोषण नहीं करता, वह अकेला खाने वाला पापी होता है।

यजुर्वेद में अपरिग्रह की कितनी सुन्दर शिक्षा है-इस गतिशील संसार में जो कुछ भी गतिशील या चरात्मक है वह सब कुछ परमात्मा से व्याप्त है। इस परमात्मा के द्वारा दिये हुए जगत् को त्यागभाव से भोगो। किसी के धन को लालसा से मत चाहो।

इस प्रकार श्रमण को ऋद्धि, सत्कार, पूजा की भावना तथा जीवन की अभिलाषा से भी रहित होना तथा परिग्रह को मूर्च्छारूप जानते हुए लेशमात्र भी उसका संग्रह नहीं करना चाहिए।

भगवान महावीर का समग्र जीवन ही अपरिग्रह की परिभाषा है।

आज पाश्चात्य जगत भी घोर परिग्रह के कारण त्रस्त है। अतः पाश्चात्य अर्थशास्त्री E.F. Schumacher ने अपरिग्रह को बड़ा महत्त्व दिया है। भारतीय अर्थशास्त्री विमला ठाकर ने भी एक अपरिग्रही साधक की बात को उद्धृत किया है-"अपरिग्रही कहेगा समाज से न्यूनतम उतना ही लूंगा जितना जीवित रहने व जीने के लिए अनिवार्य आवश्यक है और समाज को दूंगा अपनी पूरी शक्ति भर-Provision according to needs and service according to capacity."

निष्कर्ष-

परिग्रह उपभोक्ता संस्कृति का पर्याय बन गया है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ अपरिग्रह की भावना का भी विकास हुआ। दान और अपरिग्रह में एक सूक्ष्म अन्तर है। दान का अर्थ है जो दिया जाये। अपरिग्रह का अर्थ है- मूर्च्छा का अभाव। जैसे-जैसे मूर्च्छा का अभाव होता है, पदार्थों की मात्रा स्वतः ही कम होती जाती है।

पूरे भारतीय चिन्तन नें जीव-अजीव अर्थात् चेतन-जड़ सभी पदार्थों के प्रति राग-द्वेष की दृष्टि से ऊपर उठकर मानव को व्यवहार करना चाहिए- इस भावना को आदर मिला है। निवृत्ति में निःश्रेयस है यह भारतीय संस्कृति का प्रारम्भिक चिंतन रहा है । वैदिक चिन्तन की परम्परा में दान एवं अवैदिक परम्परा में अपरिग्रह और सम्यक् आजीविका की शिक्षा दी गयी है।

संदर्भ-

१. **आप्टे संस्कृत-हिन्दी कोश**, पृ. ५८१.

२. परिग्रह्यत इति परिग्रहः- **प्रश्नव्याकरण टीका**, पृ. ६३.

३. वत्थतीतं धमोपकरणं ण परिग्रहं मन्यतेत्यर्थः। तान्येव महद्धनानि मूच्छाए वा परिभुंजतस्स परिग्गहो भवति। भाव परिग्गहो रागेण दोसेण य भवति।

- **निशीथपीठिका**, पृ. १३२, १३३.

४. **आचारांग वृत्ति** पृ. ४१८

५. **आचारांग चूर्णि**, पृ. ३६६

६. **आयारो,** २/१२२, ११६, ११७

७. न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यो। -**कठोपनिषद्**- १:१.२२, पृ. ३४

८. यावद्भ्रियेत जठरं तावत् स्वत्वं हि देहिनाम्।
अधिकं योऽभिमन्येत स्तेनो दण्डमर्हति। -**भागवत पुराण**- ७.१४.८

९. पापस्ययदधिष्ठानं तच्छ्रणुत्व नराधिपः।
एकोलोभो महाग्राहो, लोभात् पापं प्रवर्तते।।

-**महाभारत शांति पर्व**- १५८/२३२६/२६

१०. निस्सग्गिय पाचित्तिय। -**विनय पिटक**

- शोधकर्ता, धर्म अध्ययन विभाग,
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

'अरिहन्त' अथवा 'अरहन्त'
(एक चिन्तन)

–श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'

नमस्कार मन्त्र के प्रथम पद में वीतराग देवों के वन्दन के उपरोक्त दोनों शब्दों में से कौन सा शब्द सही है, इस विषय पर अनेक विद्वानों ने समय-समय पर अपने चिन्तन प्रस्तुत किये हैं। प्रतीत होता है कि अब इसने विवाद का रूप ले लिया है। मेरे विचार में इसे सुलझाने में भी अनेकान्तवाद का उपयोग होना चाहिये अर्थात् अनेक दृष्टियों से विचार होना चाहिये। मैं भी विषय पर अपनी दृष्टि प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मेरे विचार में उक्त दोनों ही शब्द सही एवं उपयुक्त हैं। सत्य कहूं तो बाल्यकाल से ही मैंने नमो अथवा 'णमो अरिहन्ताणं' शब्द ही गुरुजनों से सुना तथा बोला है। 'नमो अरहंताणं' की चर्चा तो पिछले कुछ वर्षों से ही हो रही है। अरिहन्त शब्द के विरोधियों का कथन है कि यह शब्द भाव हिंसा का सूचक है। किन्तु मुझे ऐसी कोई बात दिखाई नहीं देती। आइये थोड़ा विचार कर लें कि वास्तव में शत्रु कौन है।

सामान्य एवं व्यवहार दृष्टि से हम उन बाह्य कारणों अथवा व्यक्तियों को जिनसे हमें दुःख मिलता है अपना शत्रु मान लेते हैं। परन्तु अध्यात्म अथवा निश्चय दृष्टि वे हमारे दुःख के मौलिक उपादान कारण नहीं हैं। वे केवल निमित्त मात्र हैं। मौलिक कारण हैं कर्म प्रकृतियों के निर्माता राग एवं द्वेष, जिन्हें नष्ट अथवा समाप्त किये बिना वीतराग अवस्था सम्भव ही नहीं। यही राग-द्वेष तथा उनसे उत्पन्न कर्म वास्तविक शत्रु हैं।

शब्दों के अर्थ अथवा भाव प्रत्येक संदर्भ में एक जैसे नहीं होते। बहुधा शब्दों में अनेक कार्य तथा भाव निहित होते हैं। अतः प्रसंग के अनुसार ही उनके भाव ग्रहण किये जाते हैं। घात, हनन अथवा नाश इत्यादि शब्दों से भाव हिंसा का ही बोध होता है, यह सही नहीं हो सकता। विचार कीजिये कि ऐसा ही एक शब्द है 'काटना'। एक कसाई अपने युवा पुत्र से कहता है कि बकरे को काट दो। दर्जी अपने पुत्र से कहता है इस कपड़े को काट दो। एक वृद्ध कहता है कि मैं तो समय काट रहा हूँ। देखिये एक शब्द से कितने भाव व्यक्त हुये। एक आतंकवादी ने कहीं बम रख दिया और एक मनुष्य के मन में भावना उठी कि इसे नष्ट कर दिया जाये, तो क्या यह हिंसा का भाव है। एक व्यक्ति के मन में भाव आये कि मेरे अधिकारों का हनन हो रहा है तो क्या इन भावों का हिंसा से कोई सम्बन्ध है।

यह कथन कि अरहंत प्रभु कर्म नष्ट करने की बात नहीं कहते भी सही नहीं। यदि ऐसा है तो फिर वे क्या कहते हैं ? उनका सारा प्रयास ही कर्मों को नष्ट करने के लिये होता है। उसी के लिये वे गृह छोड़ते हैं। कठोर तप तथा संयम द्वारा साधना करते हैं। इस सारी क्रिया के लिये आप कोई भी भाव के अनुरूप पर्यायवाची शब्द का प्रयोग करें कोई अन्तर नहीं पड़ता। आपके भाव ही प्रमुख हैं, शब्द नहीं।

एक बात और विचार कीजिये कि यदि 'अरिहन्त' शब्द भाव हिंसा युक्त है तो जिन शब्द (जीतने वाले) भी उसी श्रेणी में आयेगा क्योंकि जीत संघर्ष अथवा युद्ध द्वारा ही प्राप्त होती है। अतः वहां भी हिंसा भाव मानना होगा।

एक और बात का ध्यान रखना होगा कि अरिहन्त भगवान घाति कर्मों का समूल अर्थात् राग-द्वेष (क्रोध, मान, माया, लोभ) इत्यादि विकारों सहित नाश करते हैं। यदि इन विकारों का नाश हिंसा भाव है तो भी मैं उन भावों का स्वागत करूंगा क्योंकि विकारों के नष्ट होने से ही मुझे क्षमा, नम्रता, सरलता, संतोष तथा समता इत्यादि गुण प्राप्त होंगे।

'अरहन्त' शब्द का अर्थ यदि पूज्य मात्र किया जाये तो पूज्यता का भाव तो माता-पिता तथा गुरुजनों में भी निहित होता है। अतः इससे अरहंतों की श्रेष्ठता प्रकट नहीं होती। इसलिये इस शब्द का अर्थ आसक्ति रहित करना ही ठीक है। यह आसक्ति हीनता मोहनीय कर्म के नाश से ही सम्भव है।

कुछ अन्य विचार

अट्ठ विहंपि य कम्मं,
अरिभूयं सव्व जीवाणां।
तं कम्ममरिहंता,
अरिहंता तेण वुच्चंति।। (आवश्यक निर्युक्ति) श्री आचार्य भद्रबाहु स्वामी

वास्तव में आठ प्रकार के कर्म ही जीवों के शत्रु हैं। जो महापुरुष उन्हें नाश कर देता है वही अरिहन्त कहलाता है।

दग्ध बीजे यथाऽत्यन्तं, प्रादुर्भवति नाऽङ्कुरः।
कर्मबीजे तथा दग्धे न रोहति भवाङ्कुरः।।

आचार्य उमास्वामि (तत्त्वार्थसूत्रस्वोपज्ञ अन्तिम उपसंहारकारिका प्रकरण)

- १२ सी. डी., आदर्शनगर, आलमबाग, लखनऊ-२२६००५

क्रोध

– श्रीमती इन्दु कान्त जैन

क्रोध एक विकार है। क्रोध एक भूत के समान है। एक ऐसा पागलपन है जो हमारे विवेक को नष्ट कर देता है। जिस प्रकार भूत किसी के शरीर में यदि प्रवेश कर जाता है तो उस व्यक्ति का चेहरा लाल पड़ जाता है, आँखें बाहर निकल आती हैं और आवाज बदल जाती है। क्रोधी व्यक्ति में भी ठीक इसी प्रकार परिवर्तन होते हैं और धीरे-धीरे उसके चेहरे का भोलापन व सौम्यता समाप्त होने लगती है। इसके अतिरिक्त शरीर के भीतर भी अनेक प्रकार के परिवर्तन होने लगते हैं। क्रोध की अवस्था में हमारा ब्लड प्रेशर बढ़ने लगता है। जिसके कारण हार्ट अटैक और ब्रेन हेमरेज तक हो जाता है। इसके अतिरिक्त अनेक रासायनिक परिवर्तन होने लगते हैं। पाचन-तन्त्र कमजोर हो जाता है। एसीडिटी बनने लगती है। अतः हम देखते हैं कि गुस्से की अवस्था में हम अपना कितना नुकसान कर लेते हैं। जबकि जिस व्यक्ति पर हम गुस्सा हो रहे हैं उस पर हमारे क्रोध का असर क्षणिक ही रहता है फिर वह उन बातों को भुला देता है।

क्रोध करने के कई कारण होते हैं। उनमें सर्वप्रथम हमारा अहंकार होता है। अपने अहं के कारण हम दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न करते हैं। यदि कोई हमारी कही बात नहीं सुनता तो हमें क्रोध आ जाता है। हम यह नहीं सोचते कि दूसरे व्यक्ति की अपनी अलग विचार धारा है। दूसरा कारण हमारे अपने अन्दर छिपी हीन भावना है जिसके कारण यदि कोई व्यक्ति कुछ भी कहता है तो हमें लगता है कि दूसरा व्यक्ति हमें नीचा दिखाने के लिए ऐसा कह रहा है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि क्रोध की अवस्था में हम अपनी शारीरिक और मानसिक शक्ति को कमजोर कर लेते हैं। अतः ऐसी दुखद स्थिति से बचने के लिए हमें कुछ प्रयत्न करने चाहिये। जब हमें क्रोध आये तो हमें ध्यान रखना चाहिए कि आत्मा अपने शुद्ध रूप में शान्त स्वरूप है। अतः हम इस बात का स्मरण करें। गहरी सांस लें और छोड़ें, उल्टी गिनती पढ़ें, पानी पियें। इस प्रकार हमारा ध्यान उन विचारों से हटेगा, मन शान्त होगा। हमें सोचना होगा कि हर व्यक्ति की सोच अलग होती है। यदि कोई हमारी बात नहीं सुन रहा है तो हमें क्रोध करने का अधिकार नहीं है। इसके अतिरिक्त कुछ लोग हमें तकलीफ पहुंचाने के लिए ही प्रयत्न करते हैं या गलत बात

बोलते हैं। ऐसी स्थिति में उन लोगों पर विजय पाने का सबसे शक्तिशाली उपाय यही है कि हम उनकी बातों पर ध्यान न दें और प्रभावित तो बिल्कुल भी न हों। जब वह व्यक्ति देंखेगा कि उसकी बातों से हमें कष्ट नहीं पहुँच रहा है तो वह खुद ही शान्त हो जायेगा।

धीरे-धीरे और निरन्तर अभ्यास से हम अपनी विल पॉवर को स्ट्रांग बना लेंगे। इसके लिए हम प्राणायाम व योगाभ्यास का भी सहारा ले सकते हैं। इस प्रकार हम क्रोध रूपी भूत पर विजय पा लेंगे।

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे का कहना है- "एक मिनट का क्रोध नष्ट करता है साठ क्षणों की समता। क्रोध पर सदा लगाम रखना जिससे दिल में रहे अचलता।" और श्री रमा कान्त जैन कहते हैं-

"क्रोध करे मन को दुखी, मित्र भी शत्रु हो जाय।
क्षमा करे मन को सुमन, शत्रु भी मित्र हो जाय।।"

अस्तु हमें अपने क्रोध पर नियन्त्रण रखना श्रेयस्कर है।

- २१, दुली मुहल्ला, फिरोजाबाद- २८३२०३

....

भारत के उद्योग एवं विज्ञान जगत का एक जाज्वल्यमान नक्षत्र

१२ अगस्त, १९१९ ई. को अहमदाबाद में ओसवाल जातीय, श्रीमाल गोत्रीय जैन मतावलम्बी परिवार में एक ऐसे शिशु ने जन्म लिया जिसकी बहुमुखी प्रतिभा से न केवल जैन धर्मानुयायियों का अपितु समग्र भारतवासियों का भाल गर्वोन्नत हुआ। उस शिशु का नाम विक्रम था। उसके पिताश्री अंबालाल साराभाई भारी उद्योगपति थे और माता सरलादेवी बड़ी आदर्श महिला। बालक की शिक्षा का श्रीगणेश परिवार की पाठशाला में माता सरलादेवी के मार्गदर्शन में हुआ जहाँ व्यक्तित्व के पूर्ण विकास हेतु अपेक्षित आदर्शों का बाल-मन में बीज वपन हुआ। सेकेण्डरी स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त विक्रम साराभाई ने उच्च शिक्षा हेतु अहमदाबाद के गुजरात कालेज में प्रवेश लिया। तदनन्तर अग्रतर अध्ययन के लिये वह कैम्ब्रिज (इंगलैण्ड) के सेंट जॉन्स कालेज गये और सन् १९३९ ई. में वहाँ से विज्ञान में डिग्री हासिल की। भारत लौटने पर उन्हें बंगालुरु (बेंगलोर) के इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ साइन्स में महान

वैज्ञानिक सर सी.वी. रमन के प्रेरणीय मार्गदर्शन में भौतिक विज्ञान में कास्मिक किरणों के सम्बन्ध में शोध कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ। बेंगलोर में शोध कार्य करते समय सन् १९४१ ई. में एक नृत्य कार्यक्रम में उनका परिचय नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की आजाद हिन्द फौज की कमान संभालने वाली डॉ. लक्ष्मी स्वामीनाथन की छोटी बहन मृणालिनी से हुआ। वह परिचय प्रगाढ़ होकर सन् १९४२ ई. में दोनों को परिणय-सूत्र में बांध गया।

सन् १९४६ ई. में विक्रम साराभाई के अध्यवसाय से "अहमदाबाद टैक्सटाइल इण्डस्ट्रीज रिसर्च एसोसियेशन" की स्थापना हुई जिसके वह सन् १९५६ ई. तक प्रथम मानद निदेशक रहे।

द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होने पर विक्रम साराभाई पुनः कैम्ब्रिज गये और वहाँ कैवेन्डिश लेबोरेटरी में फोटो-फिशन पर अनुसन्धान कार्य किया। सन् १९४७ ई. में उन्हें अपने शोध-प्रबन्ध "Cosmic Ray Investigation in Tropical Latitudes" पर कैम्ब्रिज से डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त हुई।

सन् १९५० ई. में उन्होंने अपना अग्रतर शोध कार्य पूर्ण किया और वह अपने पैतृक उद्योगों से जुड़े तथा उनके विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। जहाँ बड़ौदा में उन्होंने औषधियों और रसायनों के जनोपयोगी घटक तैयार करने में अग्रणी साराभाई कैमिकल्स, साराभाई ग्लास, सुहरिद गेगी लिमिटेड, सिनबायोटिक्स लिमिटेड, साराभाई मर्क लिमिटेड और साराभाई इंजीनियरिंग ग्रुप का कार्य सम्हाला वहीं अहमदाबाद में "Operations Research Group" तथा प्राकृतिक एवं सिन्थेटिक औषधीय उत्पादों के अनुसन्धान हेतु "साराभाई रिसर्च सेन्टर" की स्थापना की जो अब बडोदरा (बड़ौदा) में हैं। मुम्बई में उन्होंने स्वास्तिक ऑयल मिल्स का प्रबंधन सम्हाला और तेल निकालने तथा कृत्रिम प्रसाधन एवं प्रक्षालक (Cosmetics and Detergents) उत्पादन के क्षेत्र में नये उपायों को प्रविष्ट किया। कपड़ों में सफेदी लाने वाला 'टीनोपाल' नामक द्रव्य उनके संस्थान का ही उत्पाद है। कोलकाता में स्टैण्डर्ड फार्मास्यूटिकल्स लिमिटेड का प्रबंधन सम्हाल वहाँ फार्मास्यूटिकल उत्पादों की श्रृंखला में वृद्धि करने के अलावा भारी मात्रा में पेनिसिलिन का निर्माण कराया। भारत के फार्मास्यूटिकल उद्योग में इलेक्ट्रानिक डाटा प्रोसेसिंग की संशोधन पद्धति सबसे पहले लागू करने का श्रेय भी डॉ. विक्रम साराभाई को है।

विकासमान भारत की औद्योगिक शक्ति के संचालन हेतु सुविज्ञ प्रबन्धकों की आवश्यकता का अनुमान लगाकर सन् १९६२ ई. में डॉ. विक्रम साराभाई ने अहमदाबाद में 'भारतीय प्रबंधन संस्थान' की स्थापना की। इस संस्थान ने भारत का भविष्य गढ़ने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। वह सन् १९६५ ई. तक उसके मानद निदेशक रहे।

भारत में भौतिक विज्ञान में अनुसन्धान को प्रश्रय देने हेतु डॉ. विक्रम साराभाई ने प्रो. के. आर. रामनाथन के सहयोग से अहमदाबाद में 'भौतिक अनुसंधान केन्द्र'' की स्थापना की जिसने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की। इस केन्द्र से डॉ. साराभाई के मार्गदर्शन में २० से अधिक शोधार्थियों ने डाक्टरेट उपाधि प्राप्त की। साथ ही विज्ञान को सेटेलाइट टेलीविजन के माध्यम से सुदूरवर्ती ग्रामीण अंचल के सामान्य जनों तक पहुँचाने के उद्देश्य से अहमदाबाद में ''कम्यूनिटी साइंस सेंटर'' की स्थापना की। उक्त साइंस सेन्टर ने देश की युवा शक्ति को नई दिशा दी। विज्ञान के क्षेत्र में उनके द्वारा किये गये कार्य का मूल्यांकन कर सन् १९६२ ई. में उन्हें फिजिक्स के लिये **'शान्ति स्वरूप मेमोरियल अवार्ड'** से सम्मानित किया गया और उस वर्ष सम्पन्न इंण्डियन साइंस कांग्रेस के अधिवेशन में भौतिकी अनुभाग के सभापति पद को भी उन्होंने सुशोभित किया। उनकी योग्यता से प्रभावित हो तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने सन् १९६२ ई. में भारत के अति मूल्यवान 'नाभिकीय अनुसंधान केन्द्र' का भार उन्हें सौंपा जिसे उन्होंने बड़ी कुशलता से निभाया। वह थुंबा में राकेट लांचिंग स्टेशन की स्थापना हेतु गठित 'नाभिकीय अनुसंधान के लिये भारतीय राष्ट्रीय समिति' के अध्यक्ष भी बनाये गये और उन्होंने भारत में फ्रांसीसी नरतुंग ध्वनि करने वाले राकेटों के निर्माण का कार्यक्रम प्रारंभ किया। थुंबा में भारतीय राकेट **'रोहिणी'** और **'मेनका'** के निर्माण में उनकी अहम भूमिका रही। सन् १९६६ ई. में डॉ. साराभाई आणविक शक्ति आयोग के अध्यक्ष एवं भारत सरकार में आणविक शक्ति विभाग के सचिव नियुक्त किये गये और भारत सरकार ने उन्हें **'पद्म भूषण'** के अलंकरण से सम्मानित किया। वह विभिन्न महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय समितियों के सदस्य होने के साथ-साथ इलेक्ट्रोनिक्स कमेटी, रक्षा विभाग की आपूर्ति कमेटी एवं भारत के इलेक्ट्रोनिक्स कार्पोरेशन के चेयरमैन भी रहे। डॉ. विक्रम साराभाई को इण्डियन एकेडेमी ऑफ साइंसेज, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंसेज ऑफ इण्डिया, फिजिकल सोसायटी लन्दन तथा कैम्ब्रिज फिलोसोफिकल सोसायटी प्रभृति संस्थाओं के

फैलो (सभासद) होने का गौरव भी प्राप्त रहा। सन् १९६८ ई. में राष्ट्रसंघ की 'अन्तरिक्षीय अस्तित्व के शान्तिपरक उपयोगों की खोज' के निमित्त सम्पन्न कान्फ्रेन्स में वह अध्यक्ष निर्वाचित हुए। सन् १९७० ई. में विएना में परमाणु ऊर्जा के विकासार्थ हुई १४वीं अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स के वह सभापति चुने गये तथा सन् १९७१ ई. में राष्ट्रसंघ के तत्त्वावधान में परमाणु ऊर्जा के शांतिपरक उपयोगार्थ हुई चौथी कान्फ्रेन्स के उपसभापति मनोनीत हुए।

डॉ. विक्रम साराभाई एक ऐसे कल्पनाशील और उद्‌भट विचारों के धनी व्यक्ति थे जिन्होंने चाहे वह गंगा का मैदान हो अथवा कच्छ का बंजर क्षेत्र वहाँ पिछड़ी हुई कृषि औद्योगिकी के विकास हेतु उसका सम्बन्ध आणविक ऊर्जा के विकास से कैसे जोड़ा जा सकता है, इस पर विचार किया। विज्ञान के प्रति समर्पित डॉ. साराभाई उसका उपयोग समाज के कल्याण हेतु किये जाने के लिये सतत प्रयत्नशील रहे। प्रतिदिन १८ से २० घंटे तक अथक श्रम कर देश और देशवासियों के अभ्युत्थान की चिन्ता में रत रहने वाले इस कर्मठ वैज्ञानिक ने अपने को विज्ञान की चहारदीवारी में ही बन्द नहीं रक्खा, अपितु प्रकृति-प्रेम, संगीत, फोटोग्राफी, ललित कलाओं आदि में भी रुचि ली। अपनी जीवनसंगिनी नृत्यांगना मृणालिनी को नृत्य-नाट्य कला के प्रस्फुटन हेतु वैज्ञानिक विक्रम का प्रोत्साहन एवं सहयोग सतत सुलभ रहा। फलतः शास्त्रीय नृत्य और नाट्य कला के संवर्धन हेतु **'दर्पणा नाट्य एकेडेमी'** की स्थापना हुई जिसने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की। उनके सुपुत्र कार्तिकेय और सुपुत्री मल्लिका ने भी इस क्षेत्र में निजी पहचान बनाई। मानवीय गुणों से युक्त, प्रसन्नचित्त रहने वाले इस महान वैज्ञानिक को ३० दिसम्बर, १९७१ ई. को जब वह थुंबा राकेट लांचिंग स्टेशन जा रहे थे कराल काल ने हमसे छीन लिया। मात्र ५२ वर्ष की अल्पवय में असमय हुए उनके निधन से विज्ञान जगत, मानवता और भारतवासियों की अपूरणीय क्षति हुई।

उनकी सेवाओं का मूल्यांकन करते हुए सन् १९७२ ई. के गणतन्त्र दिवस पर राष्ट्रपति ने उन्हें मरणोपरान्त **'पद्मविभूषण'** अलंकरण से विभूषित किया। ३० दिसम्बर, २००७ ई. को उन्हें दिवंगत हुए ३६ वर्ष हो गये। उद्योग जगत, विज्ञान जगत और मानवता के क्षेत्र में अपनी अमिट पहचान छोड़ जाने वाले डॉ. विक्रम साराभई की इस ३६वीं पुण्यतिथि पर हमारा भी उन्हें सादर नमन् है।

– रमा कान्त जैन

भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में सहारनपुर जनपद की जैन समाज का योगदान

- श्री अमित जैन

भारत एक ऐसा राष्ट्र है जिसका उल्लेख प्राचीनतम ग्रन्थों **"यजुर्वेद"**[१] एवं **'अथर्ववेद'**[२] के पुनीत पृष्ठों पर किया गया है। अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक, धार्मिक और राजनीतिक विशिष्टताओं के कारण भारत सदैव अग्रणी रहा है। भारत की मिट्टी, जल और वायु में ऐसे तत्व विलय हुए हैं, जिनके प्रभाव से यहाँ का बच्चा-बच्चा राष्ट्र प्रेम और भक्ति में आकंठ डूबा है। राष्ट्रप्रेमियों के स्वर की अनुगूंज से समस्त वैश्विक-भवन निनादित है। राष्ट्रीय भावनाओं की ऐसी व्यापक अनुभूति है जो विभिन्नताओं, विविधताओं एवं विचित्रताओं से भरे देशवासियों में एकात्मकता का पाठ पढ़ाती जान पड़ती है। इस सन्दर्भ में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर का कथन सटीक जान पड़ता है कि 'राष्ट्रीयता श्रेणीगत चेतना की एक अनुभूति है जो उन व्यक्तियों को, जिनमें यह प्रगाढ़ होती है, आर्थिक संघर्ष या समाज गत उच्चता-नीचता के कारण उत्पन्न होने वाले भेद-भावों को दबाकर एक सूत्र में बांधे रखती है।"[३]

डॉ. अम्बेडकर के भाव बोध के आधार पर भारत की जनता कठिन से कठिन समय में भी राष्ट्रीयता के एक सूत्र में बंधी रही, फलतः अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुई। भारत का कोना-कोना देशभक्ति, कर्तव्यनिष्ठा की मिसाल बनकर उभरा। राष्ट्र के प्रति समर्पण भाव में किसी जाति, धर्म, समुदाय, स्थान का व्यक्ति पीछे नहीं रहा। पूरब-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण प्रत्येक दिशा के राज्य, नगर, तहसील, कस्बा, गाँव भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का अहम हिस्सा बने।

भारत एक समृद्ध और विशाल देश है। यहाँ की विपुल प्राकृतिक सम्पदा और वैभव पर विदेशियों की लोलुप दृष्टि सदैव ही रही है। चाहे वह पुर्तगाली हों, तुर्क हों, मुगल हों या फिर अंग्रेज हों, सभी ने अपने-अपने ढंग से भारत को लूटने, गुलाम बनाने का प्रयास किया। यहाँ की प्राचीन, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक संस्कृति में घुसपैठ की गयी। सत्रहवीं शताब्दी में अनेक यूरोपीय देशों ने भारत से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किये। इंग्लैंड में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना की गयी, जो आगे

चलकर भारतीयों पर अपना आधिपत्य जमाने लगी। धीरे-धीरे ब्रिटिश ताकतों ने भारत को गुलाम बना लिया। तब भारतीय जनमानस त्राहि-त्राहि कर उठा और साथ ही जगी इस गुलामी से स्वतंत्र हो जाने की प्रबल भावना। इस ज्वलन्त भावना ने पूरे भारत में क्रान्ति की लहर फैला दी। सन् १८५७ ई. में आँग्ल साम्राज्य के विरुद्ध खुली बगावत का बिगुल बजा दिया गया। "इस संग्राम ने भारत में नवजागरण युग का सूत्रपात किया और भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन की ऐसी सुदृढ़ नींव रखी, जिस पर आज के भारत की भव्य अट्टालिका खड़ी हुई है।"[४]

उत्तर प्रदेश भारत का सर्वाधिक समृद्ध, विशाल और शक्ति सम्पन्न राज्य रहा है। देश के अन्य भागों की भाँति यहाँ के देश भक्तों के नाम स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अंकित हैं। इसी उत्तर प्रदेश में एक है सहारनपुर जिला, जिसने भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभाई है।

सहारनपुर का इतिहास सिन्धुघाटी की सभ्यता से जोड़ा जाता है। "समय के साथ-साथ जनपद के नाम बदलते चले गये। उत्तर वैदिक काल में यमुना और गंगा के मध्य का यह क्षेत्र 'उशीनर' कहलाता था। जन अनुश्रुति के अनुसार मुहम्मद तुगलक ने शाह हारून चिश्ती के नाम पर सहारनपुर बसाया, परन्तु इसकी पुष्टि तुगलक के समकालीन इतिहासकारों द्वारा नहीं होती। अकबर के समय में सहारनपुर नगर राजा सहारनवीर सिंह ने बसाया था। अकबर ने इसे सहारनपुर सरकार का मुख्यालय बनाया और तभी से यह सहारनपुर के नाम से विख्यात हो गया।[५]

"यह जनपद रहा है कर्म क्षेत्र स्वामी दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द और किशोरीदास वाजपेयी का और रहा है रणक्षेत्र कासिम नानौतवी, रशीद गंगोही, शेखुल-ए-हिन्द मौलाना महमूदल हसन और हुसैन अहमद मदनी का, पैदा हुए हैं इसी की कोख से राधा बल्लभ सम्प्रदाय के प्रवर्तक हित हरिवंश और इसी के प्रांगण में खेल-कूदकर बड़े हुए हैं दर्शन विज्ञान और तकनीकी के शिरोमणि सत्यकेतु विद्यालंकार, आचार्य जगदीश चन्द्र मिश्र, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', भीखनलाल आत्रेय, एस.सी. जैन और ओ.पी. जैन आदि।"[६]

सहारनपुर जनपद विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में भी प्रगति पथ पर अग्रसर रहा है। अनेक संस्थान-जल संस्थान, सिंचाई अनुसंधान संस्थान, भूमि संरक्षक केन्द्र, पेपर टेक्नालॉजी, लुगदी प्रतिष्ठान और फलोत्पादन और संरक्षण का प्रमुख केन्द्र कम्पनी बाग यहां की प्रतिष्ठा में अभिवृद्धि करते हैं।

यहाँ के वीरों ने भी अपनी मिट्टी का नाम रोशन करने में कोई कोर-कसर बाकी नहीं छोड़ी है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम धर्म की संकुचित सीमा से अछूता रहा। सभी धर्मों के व्यक्तियों ने स्वयं और देश को स्वतंत्र करवाने के लिये चलाये जा रहे आन्दोलनों में उत्साहपूर्वक भाग लिया। जैन समुदाय, जिसे अहिंसा के पुजारियों का खिताब दिया गया है क्योंकि उनका मुख्यसूत्र 'अहिंसा परमो धर्मः' है, ने भी स्वतंत्रता के आन्दोलन में तन-मन-धन से स्वयं को समर्पित कर दिया।

सहारनपुर जनपद के जैन समाज का भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में पर्याप्त योगदान रहा है। सन् १८५७ ई. की क्रांति से पूर्व की गतिविधियों में भी सहारनपुर जिले का नाम इतिहास में दर्ज है। क्रांति की अलख जगाने वाली विशेष 'चपातियां' सहारनपुर में भी आई थीं। अन्य स्थानों के निवासियों की तरह ही सहारनपुरवासियों का भी इन चपातियों ने अंग्रेजों के विरुद्ध नफरत का माहौल गर्म किया था। मई १८५७ की क्रान्ति के बाद से तो यहाँ की सेना और जनता में पर्याप्त परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देने लगा था। "देसी सिपाही और पल्टनों का व्यवहार कुछ बदलने लगा था। अवहेलना और तनाव उनके व्यवहार में आने लगा था तथा विद्रोह उनकी आँखों में दिखने लगा था। परन्तु सहारनपुर में अंग्रेजों के विरुद्ध हथियार उठाने की पहल सिपाहियों ने नहीं अपितु जनता ने की थी।"[७] इस समय सहारनपुर के मजिस्ट्रेट रॉबर्ट स्पैनकी थे, जिन्होंने जन विद्रोह से आतंकित हो अंग्रेज महिलाओं एवं बच्चों को रातों-रात मसूरी भेज दिया। सहारनपुर के प्रत्येक भाग नकुड़, गंगोह, मंगलौर, देवबन्द, रणदेवा, सढ़ौली, बुद्धखेड़ी, लखनौती, कनखल में विद्रोह की अग्नि ऐसी धधकी कि अंग्रेजों को उस पर काबू पाना लगभग असम्भव हो गया था। विप्लव की यह आग १८५८ तक अंग्रेजी सेना द्वारा बलपूर्वक कुचली गयी परन्तु राख के ढेर से चिन्गारियों को नहीं बुझाया जा सका। बाह्य रूप से सहारनपुर शान्त हो चला था। सहारनपुर के जन-विद्रोह के सम्बन्ध में नार्थ-वेस्टर्न प्राविन्सेज से सेक्रेटरी विलियम म्योर को १५ नवम्बर, १८५८ को भेजे गये पत्र में मेरठ के तत्कालीन कमिश्नर एफ. विलियम्स ने लिखा था कि "पुलिस की पूर्ण उपेक्षा-जो सम्भवतः जनता के साथ एक समझौते के कारण हुई थी कि दोनों में से कोई भी एक दूसरे के कार्य में हस्तक्षेप न करें"।[८]

१८५८ में ब्रिटिश पार्लियामेंट और इंग्लैण्ड की महारानी क्वीन विक्टोरिया की घोषणा कि- "वह ईस्ट इण्डिया कम्पनी से शासन अपने हाथों में ले रही हैं और अब

हिन्दोस्तान के लोगों के साथ हम हमदर्दी पूर्ण व्यवहार करना चाहते है",[९] के बाद भी अंग्रेजों का दमन चक्र जारी रहा। अतः सहारनपुर जिले में भी क्रान्ति नया रूप धर सामने आयी। "बीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण में स्वामी विवेकानन्द के विचारों, स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा गुरुकुल की स्थापना और जैन जागरण के अग्रदूत श्री सूरजनभान वकील, ज्योति प्रसाद और जुगल किशोर ने सामाजिक-धार्मिक सुधार आन्दोलन और राष्ट्रीय चेतना को विस्तृत करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।"[१०]

भारतीय जन-मानस में राष्ट्रीय चेतना के विकास हेतु नव जागरण, नव चेतनावादी ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, थियोसोफिकल सोसायटी, रामकृष्ण मिशन आदि की स्थापना हुई, जिसमें सहारनपुर के जैन समाज ने भी बढ़-चढ़कर भाग लिया। अछूतोद्धार, बाल विवाह प्रथा पर रोक, विधवा-विवाह, दहेज प्रथा, वेश्या-नृत्य, मृत्यु-भोज आदि कार्यों के बहिष्कार में जैन लोगों ने तन-मन-धन से योगदान दिया। इनमें मुख्य रूप से नकुड़ के बाबू सूरजभान, सरसावा के पंडित जुगल किशोर मुख्तार तथा देवबन्द के श्री ज्योति प्रसाद जैन का नाम अग्रणी रहा। इन सभी का मूलभूत उद्देश्य था कि किसी तरह से धार्मिक-सांस्कृतिक अवमूल्यन पर रोक लगे और विदेशी शासन के विरुद्ध जनता जागरूक बने। बाबू सूरजभान वकील के विषय में ठीक ही लिखा गया है कि "भारत की नवीन राजनीति में और हिन्दी गद्य के नवविकास में प्रेमचन्द का जो स्थान है, जैन समाज की नव-चेतना के इतिहास में वही स्थान बाबू सूरजभान का है।"[११]

सहानपुर का जैन समाज सामाजिक धरातल पर सजग रहते हुए एक व्यापक आन्दोलन कर देश को गुलामी से आजाद कराने में सक्रिय भूमिका का निर्वहन कर रहा था। देश व्यापी आन्दोलनों में से जैसे कि गांधी जी द्वारा चलाये गये असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन तथा भारत छोड़ो आन्दोलन और अन्य भी कोई गतिविधियां ऐसी नहीं थीं जिनमें सहानपुर के जैन लोगों ने भाग न लिया हो। रॉलट ऐक्ट का सभी ने जमकर विरोध किया। देवबन्द के ज्योति प्रसाद जी ने सोमप्रकाश वकील, मेलाराम, चमनलाल आदि को साथ लेकर गांधी जी को सहारनपुर बुलाया। "सहारनपुर के प्रसिद्ध वकील बाबू झुम्मनलाल (जैन) और बाबू मेलाराम ने वकालत का कार्य छोड़ दिया और सहानपुर में कांग्रेस की ओर से असहयोग आंदोलन का नेतृत्व किया। झुम्मनलाल जी के पुत्र शिवचन्द्र ने भी इस आन्दोलन का हिस्सा बनने के लिए कानपुर कॉलेज के बी.ए. द्वितीय वर्ष में पढ रहे अपने सात साथी छात्रों के

साथ कॉलेज छोड़ दिया और सभी असहयोग आन्दोलन का हिस्सा बने।"[१२] बाबू जुगमन्दरदास और श्री जुगल किशोर जैन का भी इस आन्दोलन में सक्रिय योगदान रहा, जिसके तहत ये सब चर्खे का प्रचार, स्वदेशी अपनाओ, शराब बन्द आदि मुख्य कार्यों में लगे।

श्री अजित प्रसाद जैन की स्वतंत्रता आन्दोलन में निर्वहन की गयी सक्रियता को कौन नहीं जानता ? कांग्रेस के विधिवत् गठन (१९२७) में उन्होंने महती भूमिका निभाई। कलकत्ता सम्मेलन, दांडी यात्रा (१९३०), सुभाषचन्द्र बोस की गिरफ्तारी (१९३२)-ऐसा कौन-सा मोर्चा रहा, जिसमें श्री जैन ने बढ़-चढ़कर भाग न लिया हो। जनपदवासियों के उत्साहवर्धन के लिये उन्होंने जगह-जगह जोशीले भाषण दिये, बैठकें आयोजित की। देवबन्द के हाकिम बाबूराम यादव की घोषणा कि "जो जलसा करेगा उसको हण्टर से पिटवाऊंगा" का जमकर सामना किया। अपने साथ ४०० कांग्रेसियों को भी इस विरोध में शामिल किया, गिरफ्तार भी हुए लेकिन निडर होकर अंग्रेजी सत्ता का हर मोर्चे पर विरोध करते रहे।

श्री अजित प्रसाद जैन की ही तरह देवबन्द में जन्मे श्री नरेन्द्र कुमार जैन ने भी बाल्यावस्था से ही क्रान्ति का मार्ग अपनाया। विद्यार्थी जीवन में स्वतंत्रता हेतु 'स्टूडेंट फाउण्डेशन' (१९३९) की स्थापना की। १९४२ के आन्दोलन में जेल गये। छिप-छिपकर अंग्रेजों के विरुद्ध प्रचार-प्रसार कर लोगों के मन में आग लगाई। ये बैंक की नौकरी से प्राप्त अपना आधा वेतन भी स्वतंत्रता पथ पर अग्रसर युवकों को संगठित करने में झोंक देते थे। आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक स्तर पर श्री नरेन्द्र जैन ने स्वतंत्रता संग्राम में अपने जिले का नाम रोशन किया।

शिक्षाविद् डॉ. रूपचन्द जैन ने भी स्वतंत्रता आन्दोलन में अपने जनपद की ओर से सक्रिय भूमिका अदा की। एक साक्षात्कार में उन्होंने बताया था- "मैंने और मेरे साथियों ने तार काटने, इमारतें तथा डाकखाना आदि जलाने का काम किया। मनानी स्टेशन को आग लगा दी। उस समय काशीराम, बनारसीदास और इन्द्रसैन (अम्बेहटा शेख) भी हमारे साथ थे। वहां से हम भाग गये...। मैंने कांग्रेस की डाक का काम सम्भाल लिया। डाक लेकर दिल्ली से आगरा गया। आगरे में मैंने डाक विलायतीराम को दे दी। वहां से उन्होंने मुझे १२०० रुपये और कुछ सामान अम्बाला पहुंचाने के लिये दिया। वहां से मुझे एक पिस्तौल और कैंचियां दिल्ली कांग्रेस कमेटी में देने को दी। वहां से सहारनपुर आया और सिनेमा देख रहा था तो सी.आई.डी. इन्सपैक्टर

तनखा साहब ने इन्टरवल में कन्धे पर हाथ रखकर मुझे वहां से भाग जाने को कहा। इसके बाद भी मैं अपने डाक वाले काम में लगा रहा और एक दिन गिरफ्तार कर लिया गया। जेल में माफी न मांगने पर हमारी (सब कैदियों की) खूब जमकर पिटाई हुई। पैरों पर लाठियां बरसाई गईं, पर हम टस से मस नहीं हुए। मेरी एक आँख और एक टांग खराब हो गयी थी।"[१३] सहारनपुर के ही प्रकाशचन्द जैन ने जेल में दारुण यातनाएं सही और अन्त में जेल में ही मृत्यु को प्राप्त हुए।

सरसावा के कैलाशचंद जैन ने १९४२ के आन्दोलन में छः महीने की सख्त कैद भोगी थी।[१४] दिनांक १९.९.१९३० को सरकार ने दफा १४४ लागू कर सम्मेलन न किये जाने की घोषणा कर दी, तो कान्फ्रेंस का स्थान जमना के पुल पर निर्धारित किया गया, किन्तु जत्थे और सत्याग्रही २० सितम्बर को सरसावा में एकत्र हो गये। सम्मेलन न होने देने के लिए जमींदारों और हरिजनों की सहायता से सम्मेलन में भाग लेने वालों की पिटाई की गई। तभी एक पुलिस के सिपाही द्वारा वैद्य रामनाथ को यह सूचना मिली कि "वैद्य रामनाथ, प्रभुदयाल, झुम्मनलाल (जैन), जम्बू प्रसाद जैन एवं कैलाशचंद जैन को गोली मार देने के आदेश हो गये हैं। इनमें से चार व्यक्ति फरार हो गये।" आपको सूचना न मिल पाने के कारण पुलिस ने आपको पकड़कर बहुत मारा, आपको अनेक चोटें आईं" २६ मार्च, १९३२ को साइक्लोस्टाइल पेपर छापकर बांटने के अपराध में श्री लाजपतराय जैन को तीन महीने का कठोर कारावास दिया गया।[१५]

श्री ज्योति प्रसाद जैन ने अपने पत्र 'जैन प्रदीप' के माध्यम से लोगों में स्वतंत्रता का आह्वान किया। रामपुर के लाला हुलासचन्द्र जैन आदि भारत सेवक समाज के सदस्य बन जन सेवा कर रहे थे। श्री अजित प्रसाद जैन, श्री सुमेरचन्द जैन एडवोकेट एवं झुम्मनलाल जैन ने अछूतोद्धार का सर्वाधिक प्रयास किया। १९२७-२८ में सहारनपुर में एक सहभोज का आयोजन किया गया, जिसमें कोई जाति, वर्ण आदि का भेद नहीं रखा गया। मौलाना मंज़रूल नबी, अजित प्रसाद जैन, हीरावल्लभ त्रिपाठी सहभोज में सक्रिय थे। अतः तीनों को उल्माओं, जैनियों और पण्डितों ने जाति से निकालने का प्रयास किया, परन्तु उन्हें सफलता न मिल सकी।[१६]

देश धर्म की बलिवेदी पर सहारनपुर व उसके आस-पास के क्षेत्रों के जैनियों-ओमप्रकाश जैन, हंस कुमार जैन, मुंशी लच्छीराम, मुंशी बाबूमल, ज्ञानेन्द्र कुमार जैन, जम्बू प्रसाद जैन, रूपचन्द जैन, नरेन्द्र जैन, लाला कुलवन्तराय जैन, पं. आत्माराम आदि ने तन-मन-धन से अपना अमूल्य योगदान दिया। इनकी स्त्रियों और

बच्चों ने भी इस महायज्ञ में इनका पूरा सहयोग दिया। श्रीमती लेखवती जैन, चमेली देवी, श्रीमती लक्ष्मी देवी जैन, श्रीमती फूलवती देवी, सुशीला देवी आदि महिलाओं का नाम सहारनपुर के स्वतंत्रता आन्दोलन में अग्रणी रहा है।

वह अपनी खू न छोड़ेंगे हम अपनी खू क्यों बदलें।
सरे तसलीम खम है जो मिजाजे यार में आवें।।

भाई लालता प्रसाद 'अख्तर' की उपरोक्त पंक्तियों ने स्वतंत्रता-संग्राम में अपना वर्चस्व बनाए रखा और अपने जिले का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित कराया। उपरोक्त सभी ने सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक स्तर पर अपनी एक विशिष्ट पहचान सहरनपुर के समाज में बनाई। सामाजिक मोर्चे पर तैनात व बिना बन्दूक-बारूद के लड़ने वाले और अपने जिले को देश का अहम हिस्सा बनाने वाले इन वीरों को हमारा शत-शत नमन ! जय हिन्द ! जय भारत !!

- २४/१, प्रेमपुरी, मुजफ्फरनगर

संदर्भ-

१. **यजुर्वेद** : दशम अध्याय, २, ३
२. **अथर्ववेद** : प्रथम कांड, सूक्त : २६, १, ४
३. अम्बेडकर डॉ. बी. आर. :**थॉट ऑफ पाकिस्तान**, पृष्ठ २५
४. जैन डॉ. कपूरचन्द्र एवं डॉ. ज्योति जैन : **स्वतंत्रता संग्राम में जैन (प्रथम खण्ड)** पृ. २४
५. शर्मा डॉ. के. के. (सम्पादक) : **सहारनपुर सन्दर्भ**, सम्पादकीय, पृ. ११
६. वही, पृ. १२,१३
७. **फ्रीडम स्ट्रगल इन उत्तर प्रदेश**, जिल्द पांच, पृ. ६६ इन्फार्मेशन डिपार्टमेंट, उत्तर प्रदेश
८. एफ. विलियम्सः **नैरेटिव ऑफ ईवेन्टस, लैटर नं. ४०६, नवम्बर १५, १८५८, एन.डब्लू. पी.**।
९. १८५८ में साम्राज्ञी विक्टोरिया द्वारा हिन्दुस्तान के राजाओं एवं प्रजा के नाम प्रकाशित किए गए घोषणा पत्र से उद्धृत।
१०. शर्मा डॉ. के. के. (सम्पादक) : **सहारनपुर सन्दर्भ**, सम्पादकीय, पृ. १२३
११. अयोध्या प्रसाद गोयलीय : **जैन जागरण के अग्रदूत**, पृ. २८७, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी १९५२
१२. साक्षात्कार : शिवचन्द्र कुमार पुत्र श्री झुम्मनलाल, मौ. जाटवान, सहारनपुर दिनांक २४.३.१९५७
१३. एक साक्षात्कार : डॉ. रूपचन्द जैन
१४. **उत्तर प्रदेश और जैन धर्म**, पृष्ठ ८६
१५. **सहारनपुर सन्दर्भ**, भाग- १, पृष्ठ १६३, एवं ५४४
१६. साक्षात्कारः हीरा वल्लभ त्रिपाठी

अमेरिका के जैन मंदिर

अमेरिका में बसे प्रवासी भारतीय जैन धर्मानुयायियों ने अपने इष्ट की आराधना हेतु वहाँ भी विभिन्न स्थानों पर जैन मंदिरों की स्थापना की है। यहाँ उनका संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है।

कैलीफोर्निया में सिलिकोन वैली में **जैन सेन्टर ऑफ नार्दर्न कैलीफोर्निया** नाम से एक भव्य मन्दिर है। १.७ एकड़ भूमि में ७.५ मिलियन डालर की लागत से बना यह मन्दिर दो खण्ड का है। ऊपरी खण्ड का आधा भाग दिगम्बर समाज और आधा भाग श्वेताम्बर समाज के पास है। मन्दिर में मूलनायक प्रतिमा वर्द्धमान महावीर स्वामी की है और उसके दाएं-बाएं शान्तिनाथ भगवान और चन्द्रप्रभ भगवान की प्रतिमाएं विराजमान हैं। नीचे के खण्ड में सभा भवन, लायब्रेरी, डाइनिंग हाल आदि हैं। इस मन्दिर की यह विशेषता है कि यहाँ दिगम्बर और श्वेताम्बर मिलजुल कर पूजा-अर्चन, विधान करते हैं।

न्यूयार्क में **जैन सेन्टर ऑफ अमेरिका** नाम से मन्दिर है जिसमें वर्द्धमान महावीर स्वामी की प्रतिमा विराजमान है। ऊपर की मंजिल में दिगम्बर मन्दिर और नीचे के तल पर श्वेताम्बर मन्दिर है। यहाँ पर भी सभी जैन धर्मानुयायी मिलजुल कर संगीतमयी पूजन करते हैं।

न्यूजर्सी के ब्लेयर्स टाउन में सुशील मुनि जी की प्रेरणा से सन् १९८३ ई. में स्थापित **सिद्धाचलम तीर्थ** है। यह १०८ एकड़ भूमि में है। यहाँ पर २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ की श्यामवर्ण की मनोहारी प्रतिमा है। सिद्धाचलम में तीर्थयात्रियों के ठहरने हेतु सुन्दर कॉटेज बनी हुई हैं और एक बहुत बड़ा डाइनिंग हॉल है। वर्ष २००७ ई. में ५-७ जुलाई को यहाँ 'जैन कन्वेंशन' सम्पन्न हुआ था जिसमें काफी संख्या में लोग सम्मिलित होने आये थे।

लॉस एन्जेल्स में भी एक भव्य दर्शनीय जैन मन्दिर है।

(मासिक **'वीर'** के जनवरी २००८ के अंक में श्रीमती लता काला के लेख पर आधारित)

अमेरिका के संग्रहालयों में जैन कलाकृतियां

विदेशों में रहने वाले कलाप्रेमियों का ध्यान जब भारत की जैन मूर्तियों की ओर आकर्षित हुआ तब वे शनैः शनैः यहाँ से अनेक सुन्दर मूर्तियां अपने संग्रहालयों की

शोभा बढ़ाने हेतु ले गये। यहाँ अमेरिका के कला संग्रहालयों में संग्रहीत कतिपय प्राचीन जैन मूर्तियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है जो प्रायः मध्यप्रदेश, गुजरात और राजस्थान से ले जायी गई बतायी जाती हैं।

क्लीवलैण्ड कला संग्रहालय, क्लीवलैण्ड, ओहियो- में प्रदर्शित जैन मूर्तियों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मूर्ति २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ की है जो दसवीं शती ईस्वी की है और मालवा क्षेत्र से प्राप्त है। लगभग आदमकद इस मूर्ति में सर्प के सात फणों के नीचे २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े हैं और कमठ अपने साथियों के साथ उन पर आक्रमण करता हुआ दिखाया गया है। तपस्यालीन पार्श्वनाथ पर दुराचारी कमठ द्वारा किये गये उपसर्ग का यह जीवन्त प्रस्तरांकन है। यद्यपि भारत के अन्य कई भागों में इस प्रकार की प्रतिमाएं हैं, किन्तु यह मूर्ति अपने आप में अद्वितीय है।

बोस्टन कला संग्रहालय, बोस्टन, मैसाचुसैट्स- में मध्य प्रदेश से प्राप्त जैन मूर्तियों का अच्छा संग्रह है। अधिकतर मूर्तियां प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ ऋषभदेव की हैं जिनमें से कुछ ध्यान मुद्रा में और कुछ कायोत्सर्ग मुद्रा में हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ एक अत्यन्त कलात्मक तीर्थंकर धड़ भी है, जिसे संग्रहालय की पट्टिका में महावीर बताया गया है, किन्तु उक्त मूर्ति में केश ऊपर को बंधे हैं और जटाएं दोनों और कंधे पर लटक रही हैं, जिससे यह मूर्ति आदिनाथ ऋषभदेव की होने की संभावना अधिक प्रतीत होती है। इस मूर्ति में शीश के दोनों ओर बादलों में उड़ते हुए आकाशचारी गन्धर्व और 'त्रिछत्र' के ऊपर तीर्थंकर की ज्ञान-प्राप्ति की घोषणा करता हुआ एक दिव्य-वादक भी बना हुआ है। यह सुन्दर मूर्ति १०वीं शती ईस्वी की प्रतीत होती है।

फिलाडेल्फिया कला संग्रहालय, फिलाडेल्फिया में जबलपुर क्षेत्र से प्राप्त कल्चुरिकालीन दसवीं शती ईस्वी की जैन मूर्तियां हैं। एक मूर्ति २४वें तीर्थंकर वर्धमान महावीर की कायोत्सर्ग मुद्रा में है। दूसरे प्रस्तरांकन में २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ और २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ कायोत्सर्ग मुद्रा में हैं। पार्श्वनाथ की पहचान उनके शीश के ऊपर बने सर्प के फणों से तथा नेमिनाथ की पहचान पीठिका पर उत्कीर्ण शंख से की गई है।

सियाटल कला संग्रहालय, सियाटल- में मध्य प्रदेश से प्राप्त मध्यकालीन कई जैन मूर्तियां, गुजरात से प्राप्त १७वें तीर्थंकर कुन्थुनाथ की एक 'पंचतीर्थी' जिसकी

पीठिका पर वर्ष १४४७ का एक लघु लेख भी उत्कीर्ण है, तथा आबू क्षेत्र से प्राप्त नर्तकी नीलांजना की सुन्दर मूर्ति प्रदर्शित हैं। ध्यातव्य है कि नर्तकी नीलांजना की नृत्य करते-करते अचानक मृत्यु हो जाने से आदिनाथ ऋषभदेव को वैराग्य हुआ था। नर्तकी नीलांजना का प्राचीनतम अंकन मथुरा की कुषाणकालीन कला में मिलता है।

एशियन कला संग्रहालय, सेन फ्रान्सिस्को, कैलीफोर्निया- में देवगढ़ क्षेत्र से प्राप्त अनेक जैन मूर्तियां हैं। वहां पर यक्षिणी अंबिका की भी एक सुन्दर मूर्ति है जिसमें यक्षिणी आम्र वृक्ष के नीचे त्रिभंग मुद्रा में खड़ी है और उसके पैरों के निकट उसका वाहन सिंह अंकित है।

वर्जीनिया कला संग्रहालय, रिचमोन्ड वर्जीनिया- में राजस्थान से प्राप्त एक त्रितीर्थी मूर्ति है जो नवीं शती ईस्वी की प्रतीत होती है। इस त्रितीर्थी में मध्य में सर्प फणों की छाया में २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ ध्यान मुद्रा में विराजमान हैं और उनके दोनों पार्श्व में एक-एक तीर्थंकर कायोत्सर्ग मुद्रा में हैं। सिंहासन की दाहिनी ओर सर्वानुमूर्ति तथा बायीं ओर अम्बिका दर्शायी गयी है। सामने दो मृगों के मध्य धर्मचक्र तथा अष्ट ग्रहों के सुन्दर अंकन हैं।

उपर्युक्त विवरण मासिक **'जिनभाषित'** के जनवरी २००८ के अंक में राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली, के डॉ. ब्रजेन्द्रनाथ शर्मा के लेख पर आधारित हैं। इनके अतिरिक्त **'अर्हत् वचन'** १५ (३) २००३ में श्री सूरजमल बोबरा के लेख के साथ पृष्ठ १४ पर प्रकाशित चित्र से **लॉस एन्जेल्स काउण्टी म्यूजियम** में त्रिभंगी मुद्रा में खड़ी श्वेत संगमरमर की जैन सरस्वती की कमनीय मूर्ति होने का भी पता चला है। वर्ष ११५३ में शिल्पी जगदेव द्वारा निर्मित १२० से. मी. आकार की यह मुर्ति गुजरात से प्राप्त हुई है। शिल्पी ने देवी के अंगों और वस्त्राभूषणों का बड़ी बारीकी से सजीव मूर्तांकन किया है। उसकी दो भुजाएं क्षत प्रतीत होती हैं। अपने बायें हाथ में वह अक्षमाला पकड़े हुए है। जंघा से नीचे उसके दोनों ओर पार्श्व में एक-एक परिचारिका खड़ी हुई है तथा चरणों में दाहिनी ओर एक भक्त बैठा हुआ है।

मनोज्ञता बसी हुई है मन्दिरों में हमारे
पाषाण जीवन्त हो उठे छेनियों के सहारे
साधना शिल्पियों की रंग लायी यहाँ पर
स्वर्ग की सुषमा उतर आयी धरा पर।।

- रमा कान्त जैन

समदर्शिता

(संत तिरुवल्लुवर के कुरल का भावानुवाद)

श्रेष्ठ गुण माध्यस्थ्य भाव, जीवन का श्रृंगार।
सबके प्रति हो एक सा, नर का यदि व्यवहार।।१।।

न्यायशील हो मनुज यदि, घटे न धन का कोष।
संततियां भोगें उसे, सहज मिले परितोष।।२।।

चाहे जितना लाभप्रद, धन का हो आदान।
अर्जन यदि अन्याय का, त्यागे तुरत सुजान।।३।।

न्याय और अन्यायमय, जीवन का अनुमान।
करवाता है व्यक्ति की, संतति का अवदान।।४।।

स्वाभाविक संसार में, नित्य उतार-चढ़ाव।
पर पंडित का जगत में, भूषण समता भाव।।५।।

नीतिरहित जब व्यक्ति का, होता हृदय-निकेत।
उसके भावी पतन का, देता है संकेत।।६।।

धर्म-पंथ के पथिक जो, समता भाव निधान।
होकर धन से हीन भी, पाते जग-सम्मान।।७।।

तुला सदृश हैं संत जन, भूषण सम व्यवहार।
भला-बुरा सब एक सा, करते हैं स्वीकार।।८।।

शुद्ध सरल होते सदा, समदर्शी के बोल।
पक्षपात करते नहीं, रखते चित्त अडोल।।९।।

व्यापारी वह श्रेष्ठ है, करता सम व्यवहार।
परधन के भी लाभ का, रखता सहज विचार।।१०।।

-डॉ. इंदरराज बैद
नारायण अपार्टमेंट
१४, स्ट्रीट १०, नंगनल्लूर, चेन्नई-६०००६१

आध्यात्मिक गीत

पर को नहीं, सुधारें खुद को, पर तो स्वयं सुधर जाता है।
अपने घर को स्वर्ग बनायें,
यही बात सारे अपनायें,
घर वाले सब बनें देवता, घर-घर स्वर्ग उतर आता है।
पर को नहीं, सुधारें खुद को, पर तो स्वयं सुधर जाता है।।१।।
सारे दोष दूर हो जाते,
फिर सारे निर्दोष कहाते,
ज्ञान-कोश खुल जाते घर-घर, नहिं अज्ञान ठहर पाता है।
पर को नहीं, सुधारें खुद को, पर तो स्वयं सुधर जाता है।।२।।
हिंसा नहीं घृणा का घर हो,
क्योंकि अहिंसामय घर-घर हो,
द्वेष नहीं, हर कोई मन में, सौहार्द सदा बसाता है।
पर को नहीं, सुधारें खुद को, पर तो स्वयं सुधर जाता है।।३।।
सम्यक् श्रम से उपयोग जगे,
मन-मानस से मिथ्यात्व भगे,
पर की कृपा-कोप दूर हो, अपना अस्तित्व सुहाता है।
पर को नहीं, सुधारें खुद को, पर तो स्वयं सुधर जाता है।।४।।
शाकाहार सदा अपनायें,
खुद खायें औ सबै खबायें,
जीवन का उपहार ग्रहण कर, पशु-पक्षी सुखी कहाता है।
पर को नहीं, सुधारें खुद को, पर तो स्वयं सुधर जाता है।।५।।

- विद्यावारिधि डॉ. महेन्द्र सागर प्रचंडिया
मंगल कलश, सर्वोदय नगर, अलीगढ़-२०२००१ (उ.प्र.)

क्षणिकाएं

संत्रास में जी रहा आज आदमी
जिधर देखिये हादसों की है गहमागहमी
बीत जाये यह पल कुशल से,
मना रहा हर पल हर आदमी।।१।।

दूर से देखें,
गुलाब कितना सुहाना लगता है।
पास जाकर छुएं,
हाथ में कांटा चुभा लगता है।।
किसी के गुण निरखने हों,
तो दूर से ही निरखिये।
अवगुण परखने हों,
तो उसके पास जाकर रहिये।।२।।

दूसरों के दोष देखने में दृष्टि रहती है हमारी
अपनी कमियां की ओर दृष्टि नहीं जाती हमारी
यदि अपनी कमियों पर भी करें हम दृष्टिपात,
तब दूसरों के दोष हमें लगेंगे न भारी।।३।।

– रमा कान्त जैन

"इस जगत में बुराइयों की तो कमी नहीं है, सर्वत्र कुछ-न कुछ मिल ही जाती हैं; पर बुराइयों को न देखकर अच्छाइयों को देखने की आदत डालनी चाहिए, अच्छाइयों की चर्चा करने का अभ्यास करना चाहिए। अच्छाइयों की चर्चा करने से अच्छाइयाँ फैलती हैं और बुराइयों की चर्चा करने से बुराइयाँ फैलती हैं।

अतः यदि हम चाहते हैं कि जगत में अच्छाइयाँ फैलें तो हमें अच्छाइयों को देखने-सुनने और सुनाने की आदत डालनी चाहिए। चर्चा तो वही अपेक्षित होती है, जिससे कुछ अच्छा समझने को मिले, सीखने को मिले।"

– अजमेर के मासिक "स्वतंत्र जैन चिंतन" के दिसम्बर २००७ के आवरण पृष्ठ से साभार

पारदर्शी-कुण्डलियाँ

चार पहिये की गाड़ी, बैठे हैं मुनिराज।
सेवक धक्का दे रहे, देखे जैन समाज।।
देखे जैन समाज, बढ़ता शिथिलाचार है।
पदयात्रा को छोड़, वाहन हुए सवार हैं।
फिर भी "पारदर्शी", हम करते जय-जयकार।
भूल गए आचार्य, आगम का साध्वाचार।।१।।

बाँटें रक्षा-पोटली, गण्डे या तावीज।
लाँघ "पारदर्शी' रहे, दीक्षा की दहलीज।।
दीक्षा की दहलीज, धर्म को खूँटी टाँगा।
इच्छा भोजन आज, सन्त पाएँ मुँह माँगा।।
महामंत्र को भूल, तंत्र के चुनते काँटे।
यंत्रों के अधीन, रक्षा-पोटली बाँटे।।२।।

- सन्तकवि ऊ "पारदर्शी"

पारदर्शी साधना केन्द्र, २६१, उत्तरी आयड़, उदयपुर-३१३००१

सोरठे

अष्ट दिशा संकेत, सुभग स्वास्तिक दे रहा।
शान्ति समृद्धि निकेत, बन जन मन में छा रहा।।१।।

रोगों का उपचार, हो छायी मन में लगन।
करें न मांसाहार, और रहें नित प्रति मगन।।२।।

नहीं बताता धर्म, आपस में लड़ना कभी।
है मनुष्यता मर्म, बनें शान्ति प्रेमी सभी।।३।।

सामिष भोजन त्याग, सात्विक भोजन कीजिये।
पाप कर्म में भाग, जान बूझ मत लीजिये।।४।।

वाणी में मधु घोल, बोले सबसे कर्ण प्रिय।
कोकिल के मृदु बोल, मृदु 'अबोध' जैसे अमिय।।५।।

- श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'

चन्द्रामण्डप, ३६०/२७, हाता नूर बेग,
सआदतगंज, लखनऊ-३

साहित्य-सत्कार

(१) **श्री चन्दनबाला शतक** : रचयिता व प्रकाशक डॉ. केशव प्रसाद गुप्त, आदर्श ग्राम सभा इण्टर कॉलेज, चरवा, कौशाम्बी- २१२२०३; २००७; पृ. ३२; मूल्य रु. ३०/-

कौशाम्बी में चन्दनबाला द्वारा भगवान महावीर को दिये गये आहार की घटना का जैन पौराणिक आख्यानों में विशिष्ट स्थान है। डॉ. केशव प्रसाद गुप्त का गृह जनपद कौशाम्बी है। अतः उस आख्यान के माध्यम से उन्होंने कौशाम्बी की महिमा को उजागर किया है। १०० छन्दों में और १२ दोहों में चन्दनबाला से सम्बन्धित कथानक को सरस, सुबोध भाषा में अभिव्यंजित किया गया है। कवि की भक्ति भावना इसमें विशेष रूप से मुखर होती है।

साथ ही ५० दोहों में **श्री पद्मप्रभुपंचाशिका** भी दी गई है जिसमें छठें तीर्थंकर पद्मप्रभु की भक्ति में उद्गार व्यक्त किये गये हैं।

डॉ. गुप्त की ये रचनाएं भक्तजनों को आनन्द देने वाली हैं।

(२) **श्रुत-आराधक (जैन इतिहास के प्रेरक व्यक्तित्व, भाग-३)**; ले० श्री कुन्दनलाल जैन; प्र. जैन विद्या संस्थान दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी-३२२२२०; नवम्बर २००७; पृ. ६+६६; मूल्य रु. २०/-

सर्वोदय पुस्तक माला के पुष्प २५ के रूप में, जैन इतिहास के प्रेरक व्यक्तित्व भाग-३ का प्रकाशन श्रुत-आराधक शीर्षक से किया गया है। इसके लेखक श्री कुन्दनलाल जैन, रिटायर्ड प्रिन्सिपल, जैन साहित्य के विशिष्ट अध्येता विद्वान हैं। उन्होंने इस पुस्तक में २० मनीषियों का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया है जो ईस्वी सन् १८७४ से १६१८ के बीच जन्में। इन विद्वानों के नाम हैं : श्री गणेशप्रसाद वर्णी, पं० चैनसुखदास न्यायतीर्थ, पं० नाथूराम प्रेमी, बाबू छोटेलाल जैन, डॉ. हीरालाल जैन, पं० चैनसुखदास न्यायतीर्थ, पं० फूलचन्द सिद्धान्तशास्त्री, बा० कामताप्रसाद, पं० मनोहरलाल आयुर्वेदाचार्य, पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री सिद्धान्ताचार्य, पं० बंशीधर व्याकरणाचार्य, डॉ० आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये, पं० परमानन्द शास्त्री, डॉ० महेन्द्र कुमार न्यायाचार्य, डॉ० दरबारीलाल कोठिया, डॉ० पन्नालाल साहित्याचार्य, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री, डॉ० ज्योति प्रसाद जैन, डॉ. गुलाबचन्द्र चौधरी और श्री अजित प्रसाद जैन।

विद्वान लेखक ने अपने संस्मरणों के साथ सभी विद्वानों का सहज सुबोध भाषा में परिचय इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि उनके पारिवारिक जीवन, जीवन संघर्ष और

जैन विद्या के क्षेत्र में किये गये अवदान का परिचय पाठक को सुलभ हो। इनमें से कुछ विद्वानों के सम्बन्ध में **शोधादर्श** में भी गुरुगुण-कीर्तन के अंतर्गत अथवा अन्यथा परिचयात्मक लेख प्रकाशित हुए हैं, यथा-वर्णी जी, मुख्तार साहब, प्रेमी जी, डॉ० हीरालाल, पं० चैनसुखदास, पं. फूलचन्द्र, पं० कैलाशचन्द्र, डॉ० उपाध्ये, डॉ० पन्नालाल और श्री अजित प्रसाद जैन। डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री का इसी अंक में गुरुगुण-कीर्तन के अंतर्गत स्मरण किया गया है। उनके जन्म के विषय में सम्यक् शोध के उपरान्त श्री रमा कान्त ने सूचित किया है कि उनका जन्म २ जनवरी, १९१६ को हुआ था न कि १६ सितम्बर, १९१२ को तथा उनके सम्बन्ध में अन्य तथ्यों का भी विवेचन किया है।

इस पुस्तक में जो सामग्री प्रस्तुत की गई है वह महत्वपूर्ण है। इस समय सीमा में पं० अजित प्रसाद, लखनऊ (१८७४-१९५१), बैरिस्टर जुगन्दरलाल जैनी (१८८१-१९२७), और ब्र० सीतल प्रसाद (१८७८-१९४२), का परिचय भी यदि सम्मिलित कर लिया जाता तो वह पुस्तक के उद्देश्य को और अधिक सार्थक कर देता। अजित प्रसाद जी और सीतल प्रसाद जी के सम्बन्ध में **शोधादर्श** में ही परिचय प्रकाशित हुए हैं।

श्री कुन्दनलाल जी ने जैन इतिहास के प्रेरक व्यक्तित्व के रूप में जिन मनीषियों का परिचय सुलभ किया है वह जैन विद्या के शोधकर्ताओं के लिए उपयोगी होगा। अष्टासीति वय प्राप्त करने पर भी श्री कुन्दनलाल जी ने जो यह श्रमसाध्य कार्य किया है उसके लिए उन्हें शतशः साधुवाद!

(३) जैन पाण्डुलिपियां एवं शिलालेख : एक परिशीलन : ले० प्रो० डॉ० राजाराम जैन; प्र. सिद्धान्ताचार्य पं. फूलचन्द्र शास्त्री फाउण्डेशन, रुड़की-२४७६६७ एवं श्री गणेश वर्णी दिगम्बर जैन संस्थान, नरिया, वाराणसी २२१००५; २००७; पृ० xiv+१०७; मूल्य रु. १००/-

पं. फूलचन्द जी शास्त्री के शताब्दी समारोह के अवसर पर २९-३० सितम्बर २००१ को आयोजित व्याख्यानमाला के अंतर्गत प्रो. डॉ. राजाराम जैन द्वारा प्रस्तुत व्याख्यानों को इस पुस्तक में प्रकाशित किया गया है। प्रो. डॉ. सत्यव्रत शास्त्री के प्राक्कथन व प्रो. डॉ. अशोक कुमार जैन के प्रकाशकीय के साथ तथा अन्त में शब्दानुक्रमणिका एवं सन्दर्भ ग्रन्थ सूची से सज्जित इस पुस्तक में ८३ पृष्ठों में पाण्डुलिपियों का महत्व, ताड़पत्रीय पाण्डुलिपियों का आकृति मूलक वर्गीकरण,

भारतीय प्राच्य-लिपियां, जैन साहित्य लेखन-परम्परा, पाण्डुलिपि का प्रारम्भिक रूप-शिलालेख एवं उनका महत्व, गंगवंश और उसके संस्थापक आचार्य सिंहनन्दि, होयसल वंश के संस्थापक सुदत्त-वर्धमान,तथा जैन पाण्डुलिपियां : ताड़पत्रीय एवं कर्गलीय प्रशस्तियों में उपलब्ध कुछ रोचक सामग्री-शीर्षकों के अन्तर्गत यह अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। १२ चित्र फलक भी हैं। विद्वान लेखक ने प्रभूत परिश्रम द्वारा सामग्री का संचयन व विवेचन प्रथम दृष्टया किया है। इसके लिए वे साधुवाद के पात्र हैं।

हमें यह देखकर विस्मय हुआ कि विद्वान लेखक को डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के किसी ग्रन्थ की जानकारी नहीं है। उन्हें **शोधादर्श** में प्रकाशित खारवेल सम्बन्धी सामग्री की जानकारी भी नहीं है। तथा खारवेल पर प्रकाशित हमारी पुस्तक के प्रथम संस्करण (१६७१) और द्वितीय संस्करण (२०००) की भी सूचना नहीं है। **शोधादर्श** विद्वान लेखक को नियमित रूप से भेजा जाता रहा है। खारवेल के सम्बन्ध में जो कुछ भी इस पुस्तक में लिखा गया है, वह सत्य तथ्यात्मक नहीं है वरन् भ्रमोत्पादक है। खारवेल को एक धर्मान्ध जैन सूचित किया जाना उसके ऐतिहासिक चरित्र के प्रति अन्याय होगा। हम नहीं समझते कि विद्वान लेखक का अभिप्राय इस श्रम साध्य प्रतिपादन में किसी पौराणिक धर्मप्रभावक आख्यान को प्रस्तुत करना रहा। खारवेल के विषय में जिस प्रकार की भ्रान्त धारणाओं का समावेश पुस्तक में किया गया है वह अन्य उपयोगी सामग्री के प्रामाणिक होने पर भी संशय उत्पन्न कर सकता है। जैन विद्वानों से हमारा यह विनम्र अनुरोध है कि जब वे इतिहास के सन्दर्भ में कोई विवेचन प्रस्तुत करें तो उतने समय के लिए भक्ति भावना से विरत हो जायें और शोध-खोज के प्रति सत्यनिष्ठ हो जायें। तदपि इस पुस्तक के लेखक और प्रकाशक को हमारा साधुवाद है कि उन्होंने इसमें संकलित उपयोगी समाग्री के साथ ही जैन विद्वत् वर्ग की धर्म प्रभावना से संश्लिष्ट मनोदशा का परिचय भी दिया है।

- डॉ. शशि कान्त

(४) **जैन धर्म की श्रमणियों का बृहद् इतिहास** : ले. डॉ. साध्वी विजयश्री 'आर्या'; प्र. भारतीय विद्या प्रतिष्ठान, एम-२/७७, सैक्टर १३, आत्म वल्लभ सोसायटी, रोहिणी, दिल्ली-११००८५; प्र.सं. २००७; पृ. १०११+५५+४४ चित्र; मूल्य रु. २०००/-

आठ अध्यायों में प्रणीत इस विशालकाय शोध-प्रबन्ध में डॉ. साध्वी विजयश्री 'आर्या' ने अथक परिश्रम कर विभिन्न स्रोतों से यत्र-तत्र बिखरी सामग्री में से छान बीन कर प्रागैतिहासिक काल से लेकर आधुनिक काल तक जैन श्रमणी परम्परा का एक व्यवस्थित इतिहास प्रस्तुत करने का दुस्साध्य कार्य किया है। प्रथम अध्याय पूर्व पीठिका और अन्तिम उपसंहार को छोड़कर शेष अध्यायों में विवेचित सामग्री इस प्रकार है- द्वितीय अध्याय में प्रागैतिहासिक काल से अर्हत् पार्श्व के समय तक हुई ३६० श्रमणियों; तृतीय में महावीर और महावीरोत्तर कालीन (वीर निर्वाण संवत् १४८९ तक) १०९ श्रमणियों; चतुर्थ में दिगम्बर परम्परा की ३१९ श्रमणियों; पंचम में श्वेताम्बर परम्परा की ३२२१ श्रमणियों; छठे अध्याय में स्थानकवासी परम्परा की २३६१ श्रमणियों तथा सातवें अध्याय में तेरापंथ परम्परा में हुई १७१९ श्रमणियों और ११६ समणियों, इस प्रकार कुल ८२०५ जैन साध्वियों का परिचय ग्रन्थ में संजोया गया है। साथ ही पूर्व पीठिका में वैदिक काल, उपनिषद् काल, महाकाव्य काल, मध्यकाल और आधुनिक काल में जैनेतर समाज में संन्यस्त नारियों की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए कुछ प्रमुख बौद्ध भिक्षुणियों, उल्लेखनीय ईसाई नन्स, इस्लाम धर्म और सूफी मत में संन्यस्त नारियों का भी परिचय देकर लेखिका ने ग्रन्थ को देश, काल और सम्प्रदाय की सीमा रेखा से परे सम्पूर्ण सन्यासिनियों का कोश बना दिया है। जैन परम्परा के चतुर्विध संघ में श्रमणी संघ की स्थिति और उसकी आचार संहिता, आन्तरिक व्यवस्था आदि पर भी प्रस्तावना में प्रकाश डाला गया है तथा ग्रन्थ में जैन श्रमणियों के समाज में योगदान को रेखांकित किया गया है।

ग्रन्थ समापन के पूर्व साध्वी जी ने पुरुष प्रधान समाज द्वारा श्रमणियों के साथ किये जाने वाले भेदभाव को इंगित करते हुए सभी जैन परम्पराओं के चतुर्विध संघ से इस धर्म विपरीत, लोक विपरीत आचरण पर प्रतिबन्ध लगाने की अपील करने का सत्साहस जुटाया है। इस श्रम-साध्य ज्ञान-भण्डार इतिहास ग्रन्थ के प्रणयन हेतु साध्वी डॉ. विजयश्री 'आर्या' जी साधुवाद की पात्र हैं।

(५) **जैन श्रमणी परम्परा : एक सर्वेक्षण** : ले. डॉ. साध्वी विजयश्री 'आर्या'; प्र. भारतीय विद्या प्रतिष्ठान, रोहिणी, दिल्ली; प्र. सं. २००७; पृ. ३७

यह कृति पूर्वोक्त शोध-प्रबंध का सार -संक्षेप है।

(६) **जैन धर्म जानिए** : ले. व संकलनकर्ता श्री शेखरचन्द्र जैन; प्र. ज्ञान प्रकाशन, बी-२५२, वैशाली नगर जयपुर-३०२०२१; प्र.सं. नवम्बर २००७; पृ. ३०८+१२; मूल्य रु. २५/-

राजस्थान प्रशासनिक सेवा से सन् १९९३ ई. में सेवानिवृत्त और जुलाई १९९७ में आचार्य विद्यानन्द जी की प्रेरणा से विगत १० वर्षों में जैन धर्म सम्बन्धी ग्रन्थों के स्वाध्याय में रत रहे विचक्षण श्री शेखरचन्द्र जैन ने अपने अध्ययन के आधार पर स्वयं अपने लिये तथा साधर्मी बन्धुओं के उपयोगार्थ दस अध्यायों में सरल भाषा में संक्षेप में क्रमवार दैनिक उपयोग में आने वाले जैन धर्म सम्बन्धी प्रायः सभी महत्वपूर्ण विषयों को इस पुस्तक में संजोया है। धर्मनिष्ठ श्रावकों को ही नहीं अपितु जैनेतर सामान्य पाठको को जैनधर्म सम्बन्धी विषयों का परिचय कराने वाली इस पुस्तक के प्रणयन हेतु लेखक साधुवाद के पात्र हैं।

(७) **हम तो कबहुँ न निज घर आये** : ले. डॉ. प्रेमचंद्र जैन; प्र. सिद्धांताचार्य पंडित फूलचन्द शास्त्री फाउंडेशन रुड़की-२४७६६७ एवं श्री गणेश वर्णी दिगम्बर जैन संस्थान, नरिया, वाराणसी-२२१ ००५; प्र.सं. २००७; पृ. १२१+११; मूल्य रु. १००/-

साहू जैन महाविद्यालय, नजीबाबाद, से सेवा निवृत्त, संस्कृत, पाली, अपभ्रंश एवं हिन्दी के प्रख्यात विद्वान डॉ. प्रेमचंद्र जैन की लेखनी से प्रसूत विवेच्य कृति में सुनो भाई साधो, 'हम तो कबहुं न निज घर आये', 'शिव मग लाग्यों चहिये' तथा कविवर दौलतराम जी के पद-इन चार प्रकरणों के माध्यम से हाथरस में जन्मे अध्यात्मरसिक जैन कवि दौलतराम पल्लीवाल (सन् १७९८-१८६६ ई.) के पदों का विवेचन बड़ी सरस-सुबोध भाषा शैली में अन्य सन्त कवियों की वाणी के सापेक्ष संजोया गया है। साथ ही अपनी आत्मकथा के तन्तु भी लेखक बड़ी सूक्ष्मता से अपने कथ्य में अनुस्यूत करता चला गया है। लेखक के अगाध अध्ययन और प्रबुद्ध चिन्तन शैली की परिचायक यह कृति इतनी रोचक है कि पढ़ना प्रारम्भ करने पर छोड़ने को जी न चाहे। कृति पर डॉ. अशोक कुमार जैन का प्राक्कथन भी कम रोचक नहीं है। पुस्तक प्रणेता और प्रकाशक दोनों साधुवाद के पात्र हैं।

(८) **प्राकृत एवं संस्कृत साहित्य में गुणस्थान की अवधारणा** : ले. साध्वी डॉ. दर्शनकलाश्री; प्र. श्री राजराजेन्द्र प्रकाशन ट्रस्ट, जयंतसेन म्यूजियम, मोहनखेड़ा (राजगढ़) धार, म.प्र.; २००७; पृ. ५०८+३६; मूल्य पठन एवं पाठन।

जैन ग्रन्थों में 'गुणस्थान' शब्द की विभिन्न परिभाषाएं मिलती हैं। अमितगति कृत **'पंचसंग्रह'** के अनुसार मोहनीय आदि कर्मों के उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशम आदि से जीव जिन विभिन्न अवस्थाओं को प्राप्त होता है वे गुणस्थान हैं। **'अभिधान**

राजेन्द्र कोश' में जीवों के ज्ञान, दर्शन, चारित्ररूप विभिन्न भाव गुण कहे गये हैं और ये गुण जिन-जिन अवस्थाओं में, जिस रूप में रहते हैं, उन्हें गुणस्थान कहा गया है। **'कर्मग्रन्थ'** की टीका के अनुसार परमपद रूप प्रासाद के शिखर पर आरोहण करने के जो सोपान हैं, वे गुणस्थान हैं। गुणस्थान १४ बताये गये हैं। जैन दर्शन के इस अति महत्वपूर्ण सिद्धान्त १४ गुणस्थानों का दिगम्बर और श्वेताम्बर आगमिक साहित्य के आलोक में ही नहीं अपितु योगवासिष्ठ, योगदर्शन, शैव दर्शन, गीता, बौद्ध दर्शन, आजीवक विचारणा और आधुनिक मनोवैज्ञानिकों की विचारणाओं आदि के परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक अध्ययन-विवेचन प्रस्तुत करने वाला यह महाकाय ग्रन्थ साध्वी डॉ. दर्शनकलाश्री के अगाध ज्ञान और अथक श्रम का परिचायक है। ९ अध्यायों में साध्वी जी ने अपने अध्ययन को विभाजित किया है और उसे अन्त में दो पशिशिष्टों से सज्जित किया है। अध्यायों के क्रमशः नाम हैं- (१) गुणस्थान शब्द का पारिभाषिक अर्थ और उसके पर्यायवाची शब्द; (२) अर्द्धमागधी आगम साहित्य और आगमिक व्याख्याओं में गुणस्थान की अवधारणा; (३) शौरसेनी आगम साहित्य में गुणस्थान की अवधारणा; (४) **तत्त्वार्थसूत्र** और उसकी टीकाओं में गुणस्थान की अवधारणा; (५) श्वेताम्बर एवं दिगम्बर कर्मसाहित्य में गुणस्थान; (६) प्राकृत और संस्कृत में अन्य प्रमुख ग्रन्थों में गुणस्थान; (७) गुणस्थान सम्बन्धी प्राचीन और समकालीन स्वतन्त्र ग्रन्थ; (८) गुणस्थान की अवधारणा : एक तुलनात्मक विवेचन; और (९) उपसंहार।

डॉ. सागरमल जैन (शाजापुर) के मार्गदर्शन में प्रणीत इस विशालकाय शोध प्रबंध पर जैन विश्वभारती, लाडनूं ने साध्वी जी को अक्तूबर २००५ ई. में पी-एच. डी. उपाधि प्रदान की थी। मूलतः गुजराती भाषी होते हुए साध्वी जी का हिन्दी पर असाधारण अधिकार इस ग्रन्थ में परिलक्षित होता है। जैन दर्शन के विशिष्ट अध्येताओं के लिये उपयोगी इस सागर सम ग्रन्थ के प्रणयन हेतु साध्वी जी और उसके सुरम्य प्रकाशन के लिये प्रकाशन संस्था साधुवाद की पात्र हैं।

(९) **डेढ़ इंच मुस्कान** : रचनाकार श्री अनिल 'बाँके'; प्र. श्रीमती उमा देवी, कवि कुटीर, २४६, राजेन्द्र नगर, लखनऊ; प्र.सं. २००७; पृ. ५०; मूल्य रु. ६०/-

अपने पिताश्री श्रद्धेय शारदा प्रसाद 'भुशुण्डि' जी के समान हास्य-व्यंग्य की अनिल बहाने में दक्ष श्री अनिल कुमार वर्मा 'बाँके' की ५३ रचनाओं का यह संकलन है। सामयिक स्थितियों का वर्णन करते हुए कवि ने विसंगतियों पर सशक्त चोट की

है। कवि का उद्‌देश्य इन रचनाओं के माध्यम से रोते हुए लोगों को हँसा देना है। सरल-सुबोध भाषा में निबद्ध यह भावप्रवण संकलन पाठकों का मन मुदित करेगा और हास्य-व्यंग्य साहित्य में अपना स्थान स्थापित करेगा, ऐसा विश्वास है।

(10) Historicity of 24 Jain Tirthankars: by Sri Mangilal Bhutoria; pub. Priyadarshi Prakashan, 7, Old Post office street, Kolkata-700 001, C-80, Gole Market, Jawaharnagar, Jaipur-301004 and RH-80, Shahunagar, Chinchwad, Pune-411019; 1st ed. 2005-06; pp.151+50 Illustrations; price Rs. 400/-.

The learned author has written this monograph in order to refute the misconception of, rather insinuation by Prof. Jagdish Prasad Sharma and Prof. Suzuko Ohira about the authenticity of the tradition of 24 Jain Tirthankars. He has tried his best in his own way to prove the historicity of the 24 Tirthankars on the basis of canonical literature and archaeological evidence. The dissertation has been dealt with in five parts containing 24 chapters. It has been supplemented by an Appendix in 4 parts and prefaced by illuminating Foreword from the pen of late Dr. L. M. Singhvi.

Mr. Bhutoria being an ardent Svetambara has naturally utilised mainly Svetambara canonical texts and traditions contained in that literature in dealing with the subject. It is not necessary that one may agree with all what he has written. There are many controversial points. For instance on the authority of Dr. Fleet he has taken Kushan Era or the date of accession of Kushan emperor Kanishka in 58 B.C. and thereby interpreted all the dates in that era, while the well accepted date of commencement of the era is 78 A.D.. Similarly on pages 31 and 58 he has given the date of Lord Mahavir as 542-470 B.C.. However, on page 100 he has reconciled with the unanimously now accepted date viz. 599 B.C. -527 B.C. Lord Mallinath, the 19th Tirthankar has been depicted as a female while according to Digambar tradition, like all other Tirthankaras, he was a male.

The writer has given an intresting turn to the story of Lord Mahavir's embryo-transfer in Ṣvetambar Jain scriptures. According to him Siddhartha had two wives, the Brahmini Devananda and the Kshatriyani Trisala. Devananda gave birth to Lord Mahavir. But later on it was thought more profitable to give out that Mahavir

was the son and not merely the step son of Trisala. The author over all deserves congratulations for bringing out this fine monograph to establish the historicity of the 24 Jain Titrhankars.

उपर्युक्त के अतिरिक्त निम्नलिखित साहित्य की प्राप्ति साभार स्वीकार है-

(१) **काव्यसुधा मन्दाकिनी (स्तोत्र, भजन, कविताएं)** : रचयिता श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास'; प्र. श्री वीरेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती रेणु जैन, १२, सी.डी., आदर्श नगर, लखनऊ-५; २००७; पृ. ६०; मूल्य भक्तिपूर्वक पठन।

(२) **सद्धर्म मंजरी (मुक्तक काव्य संग्रह)** : रचयिता एवं प्रकाशक डॉ. इंदरराज बैद, १४, नारायण अपार्टमेन्ट, १०वीं गली, नंगनल्लूर, चेन्नै-६०० ०६१; प्र.सं. २००७; पृ. ८४।

(३) **वन्दना (७२ भजनों का संकलन)** : रचयिता (स्व.) श्री माणकचंद पाटनी 'पंकज'; प्र. श्री धर्मचन्द पाटनी, १/५१४, शान्तिपुरा, वैशाली नगर, अजमेर; द्वि. सं. २००५; पृ. ८०; मूल्य रु. १०/-

(४) **सहज-आनन्द (अंक ६४, जनवरी-मार्च २००८)** : संपादक पं. दुर्गाप्रसाद शुक्ल; प्र. मेघ प्रकाशन, २३६, गली कुंजस, दरीबाकलां, चांदनी चौक, दिल्ली-११०००६; पृ ८२; मूल्य रु. २५/-, पत्रिका में सम्पादकीय के अतिरिक्त १७ आलेख व २ कहानी हैं।

(५) **प्राकृत भारती (शोध एवं आलोचना की अर्द्धवार्षिकी)** : प्रवेशांक वर्ष २००७ ; सम्पादक डॉ. रामजी राय; प्र. प्राकृत साहित्य विकास परिषद्, तिलकनगर, कतिरा, आरा, जिला भोजपुर-८०२३०१ (बिहार); पृ. १७६; मूल्य रु. १००/-; पत्रिका में सम्पादकीय; स्वाध्याय कक्ष के अन्तर्गत ७ कृतियों/पत्रिकाओं की परिचयात्मक समीक्षा के अतिरिक्त १७ मनीषियों के आलेख हैं जिनमें 'बड्डकहा' पर हमारा आलेख भी सम्मिलित है।

(६) **आप बनें सर्वश्रेष्ठ** : ले. श्री जिनेश कुमार जैन; प्र. श्रुत संवर्द्धन संस्थान, प्रथम तल, २४७, दिल्ली रोड; मेरठ; प्र. सं. २००७; पृ. ८०; मूल्य रु. २०/-

(7) **Hemaraj Pande's Caurasi Bol:** by Prof. Padmanabh S. Jaini, pub. Siddhantacharya Pt. Phool Chandra Shastri Foundation, Roorkee-247 667 and Shri Ganesh Varni Digamber Jain Sansthan Naria, Varanasi-221 005; 1st ed. 2007; pp.38+8; price Rs. 40/-

- **रमा कान्त जैन**

समाचार विविधा

'इस्लाम और शाकाहार' पुस्तक का विमोचन-

कोलकाता में विश्व मैत्री दिवस पर राष्ट्र संत कमल मुनि जी के सान्निध्य में पद्मश्री मुजफ्फर हुसैन द्वारा प्रणीत **'इस्लाम और शाकाहार'** पुस्तक का विमोचन हुआ। हिंसा के दुष्परिणामों और इस्लाम के परिप्रेक्ष्य में शाकाहार पर बल देने वाली इस कृति का गुजराती संस्करण प्रकाशित हो चुका है और अंग्रेजी व उर्दू में भी अनुवाद हो रहा है। पुस्तक रु. १००/- मनीआर्डर भेजने पर श्री जे. के. संघवी, ३०५, स्टेशन रोड, संघवी भवन, शंकर मंदिर के सामने, थाने, मुम्बई- ४००६०१ से प्राप्त हो सकती है।

भगवान ऋषभदेव द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

दिनांक १-२ दिसम्बर, २००७ ई. को ऋषभांचल, वर्द्धमानपुरम्, गाजियाबाद में ब्र. माँ श्री कौशल के सान्निध्य में एक द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी पांच सत्रो में सम्पन्न हुई जिसमें देश के ३५ गण्यमान्य विद्वान सम्मिलित हुए। संगोष्ठी का संयोजन डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन (गाजियाबाद) तथा डॉ. कपूरचन्द जैन (खतौली) ने किया। डॉ. शीतलचन्द (जयपुर) की अध्यक्षता में हुए प्रथम सत्र में डॉ. जयकुमार जैन (मुजफ्फरनगर) ने "जैनेतर संस्कृत साहित्य में ऋषभदेव" तथा श्री प्रभात कुमार जैन (गाजियाबाद) ने "ऊर्जा का वैश्विक रूप ऋषभदेव" विषयक शोधपूर्ण आलेखों का वाचन किया। प्रो. भागचन्द जैन भास्कर (नागपुर) की अध्यक्षता में सम्पन्न द्वितीय सत्र में पं. नीरज जैन (संतना), डॉ. श्रीयांस सिंघई (जयपुर), डॉ. ज्योति जैन (खतौली) एवं डॉ. रेनू जैन (मेरठ) ने अपने गवेषणात्मक आलेख प्रस्तुत किये। तृतीय सत्र डॉ. भागचंद्र जैन 'भागेन्दु' (दमोह) की अध्यक्षता में हुआ जिसमें पं. सरमनलाल (सरधना), पं. शीतलचन्द्र जैन (जयपुर), डॉ. पुष्पलता जैन (नागपुर), डॉ. सुपार्श्वकुमार (मुजफ्फरनगर), प्रतिष्ठाचार्य विनोद कुमार (रजवांस), डॉ. कमलेश कुमार एवं डॉ. सनत कुमार जैन (जयपुर), डॉ. भागचन्द्र भागेन्दु प्रभृति विद्वानों ने विद्वत्तापूर्ण आलेख प्रस्तुत किये। चतुर्थ सत्र ऋषभांचल गौरव ग्रन्थ के सम्पादन-प्रकाशन की चर्चा को समर्पित रहा। समापन सत्र में डॉ. भागचन्द्र जैन भास्कर, डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, डॉ. सुरेशचन्द्र जैन (दिल्ली), डॉ. कपूरचन्द जैन और ब्र. भैया जयकुमार निशान्त के आलेखों का वाचन और सत्र अध्यक्ष पं. नीरज जैन द्वारा विद्वत्सम्मान समारोह हुआ।

श्री अजित प्रसाद जैन का पुण्य स्मरण

लखनऊ में १ जनवरी, २००८ ई. को ६१वें जन्म दिन पर निर्भीक पत्रकार एवं समाजसेवी स्व. श्री अजित प्रसाद जैन का पुण्य स्मरण किया गया। वह **'शोधादर्श'** (लखनऊ) और **'समन्वय वाणी'** (जयपुर) पत्रिकाओं के प्रधान सम्पादक तथा तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., के संस्थापक-महामंत्री रहे थे। अपने जीवनकाल में अनेक स्थानीय, प्रादेशिक और राष्ट्रीय स्तर की धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं से वह सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे थे। एक धर्मनिष्ठ सुश्रावक के रूप में उनकी ख्याति थी। पत्रकारिता धर्म का सम्यक् निर्वहन करते हुए अपने सम्पादन काल में उन्होंने **'शोधादर्श'** में एक सामयिक पत्रिका का रस भर दिया था। उनकी प्रखर लेखनी से प्रसूत लेखों, सम्पादकीयों और 'समाचार विमर्श' के अन्तर्गत सामयिक टिप्पणियों ने अगणित प्रबुद्ध पाठकों को उनका प्रशंसक बना दिया था।

१ जनवरी को प्रातः तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के शोध पुस्तकालय में उनके चित्र पर माल्यार्पण कर श्रद्धा-सुमन अर्पित किये गये। तदनन्तर अपराह्न में ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ में श्री लूणकरण नाहर जैन की अध्यक्षता में सम्पन्न तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., की साधारण सभा की बैठक में उनके चित्र पर माल्यार्पण कर उनका पुण्य स्मरण किया गया। सर्वप्रथम श्री नलिन कान्त जैन ने उनके जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व पर विशद प्रकाश डाला। तदनन्तर श्री नरेशचंद्र जैन, कु. पलक जैन, श्री रोहित कुमार जैन, श्री हंसराज जैन और डॉ. शशि कान्त ने स्व. श्री अजित प्रसाद जी से सम्बंधित अपने संस्मरण सुनाये और उनके प्रति भावभीने उद्गार व्यक्त किये। श्री लूणकरण नाहर जैन और श्री रमा कान्त जैन ने उन्हें काव्यांजलि अर्पित की।

सायंकाल श्रद्धेय अजित प्रसाद जी के आवास पारस सदन, आर्यनगर, लखनऊ में भी उनके चित्र पर माल्यार्पण तथा सवा घंटे के णमोकार महामंत्र के सामूहिक पाठ के साथ उनका पुण्य स्मरण किया गया।

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन स्मृति-गोष्ठी

६ फरवरी को ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ में श्रद्धेय इतिहास-मनीषी विद्यावारिधि (स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के ६७वें जन्म दिवस पर स्मृति-गोष्ठी आयोजित कर उनका पुण्य स्मरण किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता पं. विष्णुदत्त

शर्मा ने की और संचालन ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट के सचिव श्री रमा कान्त जैन ने किया।

श्रद्धेय डॉक्टर साहब तथा वाग्देवी सरस्वती के चित्रों पर माल्यार्पण एवं दीप-प्रज्ज्वलन के अनन्तर श्रीमती मंजरी जैन और श्रीमती सीमा जैन द्वारा डॉक्टर साहब द्वारा रचित 'वीतराग स्वरूपम्' और 'जय महावीर नमो' का समवेत गायन हुआ। तत्पश्चात् श्रीमती सीमा जैन ने इतिहास-मनीषी के जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व पर संक्षेप में प्रकाश डाला। श्री अंशु जैन 'अमर' ने ११ सितम्बर, १९५५ ई. को लखनऊ के दैनिक 'नवजीवन' में प्रकाशित डॉक्टर साहब के आलेख 'वृहत्तर भारत की एक झांकी' के अंश का वाचन किया। सर्वश्री नरेशचन्द्र जैन और मगन लाल जैन ने अपने संस्मरणात्मक उद्गारों में डॉक्टर साहब से ज्ञानार्जन की प्रेरणा प्राप्त होने और उनका स्नेहभाजन होने की बात को विशेषतः रेखांकित किया। श्री लूणकरण नाहर जैन ने सर्वप्रथम सन् १९८१ ई. में मुनि लाभचन्द जी के प्रसंग से चारबाग मंदिर में डॉक्टर साहब के सम्पर्क में आने और उनका स्नेह प्राप्त होने का उल्लेख करते हुए उन्हें अपनी काव्यांजलि अर्पित की तथा 'वीर तूने जहां में उजेला किया' भजन सुनाकर वातावरण को रससिक्त किया। डॉक्टर साहब के ज्येष्ठ पुत्र डॉ. शशि कान्त ने बतलाया कि उन्हें पिताजी से किसी भी विषय को तथ्यपरक युक्तियुक्त ढंग से सोचने-समझने का जो संस्कार प्राप्त हुआ है उसका निर्वहन उनकी संतति भी कर रही है। श्री रमा कान्त जैन की विनयांजलि और श्री अरविन्द पति त्रिपाठी एवं अध्यक्ष पं. विष्णुदत्त शर्मा के उद्गारों के साथ कार्यक्रम पूर्ण हुआ।

निवाई में दो दिवसीय अखिल भारतीय विद्वत् संगोष्ठी-

जैन नसिया निवाई, जिला टोंक (राजस्थान), में १५-१६ फरवरी को पंडित प्रवर आशाधर के **'धर्मामृत सागार'** पर चार सत्रों में दो दिवसीय अखिल भारतीय विद्वत् संगोष्ठी सम्पन्न हुई। संगोष्ठी में १३ विद्वान मनीषियों ने **सागार धर्मामृत** में वर्णित विविध विषयों पर अपने सारगर्भित आलेखों का वाचन किया। संगोष्ठी समन्वयक पं. सुनील जैन 'संचय', शास्त्री (मेरठ) रहे और सत्रों की अध्यक्षता क्रमशः डॉ. विमला जैन 'विमल' (फिरोजाबाद), डॉ. सनत कुमार जैन (जयपुर), प्रो. उदयचंद जैन (उदयपुर) एवं पं. खेमचंद जैन (जबलपुर) ने की।

छत्तीसगढ़ में नहीं खुलेंगे कत्लखाने

१ मार्च को रायपुर में छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह ने कहा कि राज्य सरकार गौवंश की रक्षा और पशुधन के संरक्षण तथा संवर्द्धन के लिये वचनबद्ध है। उन्होंने कहा कि छत्तीसगढ़ में उनकी सरकार के रहते कहीं भी कत्लखाने नहीं खुलेंगे। राज्य में गौवध पर पहले से प्रतिबंध है। भगवान महावीर के प्रेरणादायक सिद्धान्त 'जियो और जीने दो' का अनुकरण करते हुए उन्होंने राज्य के २४ लाख गरीबों को तीन रुपये किलो में प्रति माह ३५ किलो चावल उपलब्ध कराने की योजना आरम्भ की।

भारतीय जैन मिलन का वार्षिक अधिवेशन-

भारतीय जैन मिलन का ४२वां वार्षिक अधिवेशन १ व २ मार्च को जैन मिलन लखनऊ के सौजन्य से सम्पन्न हुआ। १ मार्च को रवीन्द्रालय, चारबाग, लखनऊ में तीन सत्रों में आयोजित अधिवेशन में जहाँ राष्ट्रीय अध्यक्ष एवं मंत्री तथा क्षेत्रीय अध्यक्षों और मंत्रियों की रिपोर्ट और विचार सुने गये तथा विशिष्ट कार्यकर्ताओं का सम्मान किया गया वहीं देश के विभिन्न अंचलों से पधारे प्रतिनिधियों को २ मार्च को रत्नपुरी और अयोध्या के जिन मंदिरों के दर्शन कराये गये। भाजपा के प्रदेशाध्यक्ष श्री रमापति राम त्रिपाठी अधिवेशन में मुख्य अतिथि थे।

अधिवेशन में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, के उपाध्यक्ष, लखनऊ में १ जनवरी, १९५९ ई. को जैन मिलन का संस्थापना कराने वाले और वर्षों उसके मंत्री व अध्यक्ष रहे और वर्तमान में संरक्षक तथा भारतीय जैन मिलन की कार्यकारिणी से सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे ७५ वर्षीय समाजसेवी **वीर नरेश चन्द्र जैन (लखनऊ)** को मुन्नेलाल जैन कागजी ट्रस्ट की ओर से **मिलन उपलब्धि सम्मान (लाइफ टाइम अचीवमेन्ट)** प्रदान किया गया तथा भारतीय जैन मिलन द्वारा स्वयं अपनी ओर से भी उनका सम्मान किया गया। इस सम्मान प्राप्ति के लिए वीर नरेश चन्द्र जी को **शोधादर्श** परिवार की ओर से भूरिशः बधाई!

डॉ. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य की जन्म जयन्ती

५ मार्च को सागर में श्रद्धेय डॉ. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य का ९७ वां जन्म जयन्ती समारोह पूर्व सांसद सेठ डालचन्द जैन की अध्यक्षता में मनाया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी ने **"भारतीय संस्कृति में जैन परम्परा का योगदान"** विषय पर सारगर्भित व्याख्यान दिया। कार्यक्रम संयोजक डॉ. पन्नालाल जी के सुपुत्र श्री प्रकाश चंद जैन एवं डॉ. राजेश जैन थे।

अभिनन्दन

साध्वी स्थितप्रज्ञा जी को डॉ. सागरमल जैन (शाजापुर) के निर्देशन में प्रणीत शोध-प्रबन्ध **"जैन मुनि की आहारचर्या : पिण्डनिर्युक्ति के विशेष सन्दर्भ में"** पर जैन विश्व भारती, लाडनूं, ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदान की।

श्रीमती शिवाली को उनके शोध-प्रबन्ध **"तत्त्वानुशासन का समीक्षात्मक अध्ययन"** पर तथा **श्रीमती पूनम रानी** को उनके शोध-प्रबन्ध **"द्रव्य संग्रह एवं उनकी ब्रह्मदेव टीका का समीक्षात्मक अध्ययन"** पर एम. जे. पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली, ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदान की। ये दोनों शोध-प्रबन्ध डॉ. रमेशचन्द्र जैन (बिजनौर) के मार्गदर्शन में लिखे गये।

सुश्री पिऊ जैन (उदयपुर) को डॉ. हुकमचंद जैन के निर्देशन में प्रणीत शोध-प्रबन्ध **"आगम साहित्य में वनस्पति विज्ञान, पर्यावरण एवं संरक्षण"** पर तथा **प्रतिष्ठाचार्य महावीर प्रभाचन्द शास्त्री (सोलापुर)** को डॉ. उदय चन्द्र जैन के निर्देशन में प्रणीत शोध-प्रबन्ध **"श्रमणाचार और चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी के विचार : एक अनुशीलन"** पर मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदान की।

सौ. मंजुषा रमणलाल सेठी (दिल्ली) को डॉ. सुदीप जैन के निर्देशन में प्रणीत शोध-प्रबन्ध **"भगवती आराधना ग्रन्थ का सांस्कृतिक अध्ययन"** पर लाल बहादुर शास्त्री विद्यापीठ, दिल्ली, ने पी-एच. डी. उपाधि प्रदान की।

साध्वी श्री अनेकलताश्री को श्री आनन्द प्रकाश त्रिपाठी के निर्देशन में प्रणीत शोध-प्रबन्ध **"आचार्य श्री हरिभद्रसूरि म. के दार्शनिक चिन्तन का वैशिष्ट्य"** पर जैन विश्व भारती विश्वविद्यालय, लाडनूं, ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदन की।

श्रीमती संगीता विनायका (इन्दौर) को डॉ. संगीता मेहता के निर्देशन में प्रणीत शोध-प्रबन्ध **"गणिनी आर्यिका ज्ञानमति माताजी की संस्कृत रचनाओं का साहित्यिक एवं दार्शनिक अनुशीलन'** पर देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर, ने डाक्टरेट उपाधि प्रदान की।

श्रीमती मंजु जैन (जयपुर) को डॉ. पी.सी. जैन के निर्देशन में प्रणीत शोध-प्रबन्ध **"द्वादश अनुप्रेक्षाओं का दार्शनिक एवं सामाजिक अध्ययन"** पर राजस्थान विश्वविद्यालय ने पी-एच.डी. उपाधि प्रदान की।

११ सितम्बर, २००७ को ब्रज कला केन्द्र, मथुरा, द्वारा ब्रज भाषा के उन्नायक कवि तथा अनेक ग्रन्थों के रचनाकार-सम्पादक मनीषी **श्री गयां प्रसाद तिवारी 'मानस' (लखनऊ)** को **"बसंती देवी दानी ब्रज विभूति सम्मान २००७'** से पुरस्कृत किया गया।

इण्डियन वेजीटेरियन कांग्रेस चेन्नई के मुम्बई में आयोजित होने वाले स्वर्ण जयन्ती समारोह में कोलकाता में कर्मठ शाकाहार विशेषज्ञ एवं मांस निर्यात के अग्रणी विरोधकर्ता 'दिशाबोध' के सम्पादक **डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा** को **"टार्च बियरर ऑफ वेजिटेरियनिज्म"** की उपाधि से सम्मानित किया गया।

३० दिसम्बर, २००७ को चेन्नै में करुणा इन्टरनेशनल द्वारा **श्रीमती मेनका गांधी, श्री देवेन्द्रराज मेहता (जयपुर), श्री दुलीचन्द्र जैन (चेन्नै)** तथा **डॉ. साधनाराव को 'करुणारत्न'** पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

३० दिसम्बर, २००७ ई. को दयालबाग डीम्ड विश्वविद्यालय, आगरा, के हिन्दी विभाग के रीडर, **डॉ. आदित्य प्रचंडिया,** डी.लिट्., को उनकी साहित्यिक सेवाओं हेतु अखिल भारतीय साहित्य कला मंच, मुरादाबाद, द्वारा **'साहित्य शिरोमणि'** सम्मान से पुरस्कृत किया गया।

श्रुत संवर्द्धन संस्थान मेरठ ने वर्ष २००७ के पुरस्कार निम्नवत दिये जाने की घोषणा की :-

(१) **पं. बालमुकुंद शास्त्री, मुरैना,** को आगमिक ज्ञान हेतु **आचार्य शान्तिसागर (छाणी) स्मृति पुरस्कार;**

(२) **डॉ. सनत कुमार जैन, जयपुर,** को जिनवाणी प्रभावना हेतु **आचार्य सूर्यसागर स्मृति पुरस्कार;**

(३) **डॉ. विजय कुमार जैन, लखनऊ,** को पत्रकारिता हेतु **आचार्य विमलसागर स्मृति पुरस्कार;**

(४) **डॉ. सुदर्शनलाल जैन, वाराणसी,** को जैन विद्या के अध्ययन-अनुसंधान हेतु **आचार्य सुमतिसागर स्मृति पुरस्कार;**

(५) **डॉ० मालती जैन, मैनपुरी,** को जैन धर्म/दर्शन पर मौलिक अप्रकाशित कृति हेतु **मुनि वर्द्धमानसागर स्मृति पुरस्कार;**

(६) **संस्कृति संरक्षण संस्थान, दिल्ली,** को **सराक पुरस्कार २००७;** तथा

(७) **डॉ. अनुपम जैन, इन्दौर,** को श्रुत संवर्धन संस्थान की गतिविधियों के सुसंचालन तथा जैन धर्म-दर्शन में निहित गणित के विशिष्ट अध्ययन हेतु **उपाध्याय ज्ञानसागर स्वर्ण जयन्ती पुरस्कार।**

इस वर्ष गणतन्त्र दिवस पर भारत सरकार ने भगवान महावीर विकलांग सहायता समिति, जयपुर, के संस्थापक- चेयरमैन **श्री देवेन्द्रराज मेहता** को **'पद्मभूषण'** तथा चिकित्सा क्षेत्र में विशिष्ट अवदान हेतु **डॉ. राकेश कुमार जैन** को और विज्ञान एवं इंजीनियरिंग क्षेत्र में अवदान हेतु **श्री भंवरलाल हीरालाल जैन** को **'पद्मश्री'** अलंकरण से सम्मानित करने की घोषणा की ।

६ फरवरी को दिल्ली में भोगीलाल लेहरचन्द इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी द्वारा **डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव (पटना)** को वर्ष २००६ का **आचार्य हेमचन्द्र सूरि सम्मान** प्रदान किया गया।

कवयित्री श्रीमती पुष्पा सिंघी (कटक) को राष्ट्रीय राजभाषा पीठ, इलाहाबाद, द्वारा **भारती शिरोमणि** सम्मान से सम्मानित किया गया।

मुम्बई में सम्पन्न **भारत जैन महामंडल** की कार्यकारिणी की बैठक में ऑल इंडिया जैन श्वेताम्बर कांफ्रेंस के उपाध्यक्ष **श्री चम्पालाल किशोरचन्द वर्धन** सर्वसम्मति से आगामी तीन वर्ष के लिये **अध्यक्ष** निर्वाचित हुए।

भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी **श्री लालचन्द सिंघी जैन विश्व भारती, लाडनूं, के कुलाधिपति** मनोनीत किये गये।

अखिल भारतवर्षीय श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कॉन्फ्रेन्स के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष **श्री सुभाष ओसवाल** भारत सरकार के गृह मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्य मनोनीत किये गये।

आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश **श्री गणपत सिंह सिंघवी** भारत के सर्वोच्च न्यायालय में न्यायाधीश मनोनीत किये गये।

राजस्थान उच्च न्यायालय के वरिष्ठतम न्यायाधीश **श्री राजेश बालिया** राजस्थान उच्च न्यायालय के कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किये गये।

न्यायाधीश **श्री आर. राय. लोढ़ा** राजस्थान उच्च न्यायालय के प्रशासनिक न्यायाधीश नियुक्त किये गये।

सेबी के पूर्व अध्यक्ष जोधपुर निवासी **श्री देवेन्द्रराज मेहता** को अमेरिका की प्रतिष्ठित संस्था 'इण्डियन फॉर कलेक्टिव एक्शन' की ओर से केलिफोर्निया में

उल्लेखनीय समाजसेवा हेतु **सोशल एंटरप्रेन्योर अवार्ड** से सम्मानित किया गया। श्री मेहता ने अवार्ड में प्राप्त ५० हजार डालर राशि विकलांगों के कल्याण हेतु देने की घोषणा की। 'राजस्थान एसोसियेशन ऑफ नार्थ अमेरिका' ने इस अन्तर्राष्ट्रीय उपलब्धि पर श्री मेहता का न्यूयार्क में सम्मान किया और अमेरिका के टैक म्युजियम संस्थान ने उन्हें प्रतिष्ठित **टेक म्यूजियम अवार्ड फॉर इनोवेशन फॉर बेनिफिट ऑफ ह्युमेनिटी** तथा **सटिफिकेट ऑफ कांग्रेसनल रिकग्निशन** प्रदान किया।

अमेरिका की 'जैन वर्ल्ड फाउडेशन' ने पंजाबी भाषा के जैन लेखक व अनुवादक **श्री रविन्द्र जैन (मालेरकोटला)** और **श्री पुरुषोत्तम जैन (मंडी गोविन्दगढ़)** को **'ज्वैल ऑफ जैन वर्ल्ड'** पद से अलंकत किया। ये दोनों महानुभाव सन् १९७२ ई. से जैन साहित्य के पंजाबी अनुवाद और लेखन मे संलग्न हैं और इनकी ४० से अधिक कृतियां पंजाबी में प्रकाशित हो चुकी हैं।

डॉ. विमल कुमार जैन (जयपुर) को उनके शैक्षिक, साहित्यिक, सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में की गई सेवाओं हेतु उदगाँव (महाराष्ट्र) में **आ. आदिसागर विद्वत् पुरस्कार, २००७** से सम्मानित किया गया।

शोधादर्श के सुधी पाठक एवं आजीवन ग्राहक **श्री वेद प्रकाश गर्ग (मुजफ्फरनगर)** को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने उनकी कृति **'हिन्दी सूफी काव्य'** के लिये पुरस्कृत किया।

१० फरवरी, २००८ को कोलकाता में श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा राजस्थान और कोलकाता के समाजसेवी उद्योगपति **श्री सुन्दरलाल दूगड़** को **'भामाशाह'** अलंकरण से सुशोभित किया गया।

शाकाहार के प्रचार-प्रसार, शोध, जागृति एवं शाकाहार द्वारा चिकित्सा के लिये समर्पित **डॉ. मनोज कुमार जैन**, निदेशक, शाकाहार चिकित्सा एवं शोध केन्द्र, भोगाँव (मैनपुरी) भगवान महावीर फाउण्डेशन, चेन्नै, द्वारा **१२वें भगवान महावीर अवार्ड** के लिये नामांकित किये गये।

१३ फरवरी को गंज वासौदा में अ.भा. दिगम्बर जैन परिषद की कार्यकारिणी की बैठक में **डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल, अमलाई,** को भ. महावीर की जन्मस्थली वैशाली के सर्वेक्षण आदि हेतु **'परिषद शोध शिरोमणि'** उपाधि से सम्मानित किया गया तथा **श्री बलवन्तराय जैन, भिलाई,** को पुनः परिषद का राष्ट्रीय अध्यक्ष निर्वाचित किया गया।

२४ फरवरी को **डॉ. सागरमल जैन, शाजापुर,** को प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर ने **'प्राकृत भारती गणधर गौतम पुरस्कार, २००८'** से सम्मानित किया।

२४ फरवरी को नई दिल्ली में **अहिंसा इन्टरनेशनल** द्वारा साहित्य वाचस्पति **डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव (पटना)** को **डिप्टीमल आदीश्वरलाल जैन साहित्य पुरस्कार ; श्री अजित जैन 'जलज' (ककरवाहा, टीकमगढ़)** को **भगवानदास शोभालाल जैन शाकाहार पुरस्कार; भगवान महावीर विकलांग सहायता समिति, जयपुर,** को **प्रेमचंद जैन रोगी सेवा/चिकित्सा पुरस्कार; सुश्री कुसुमा रज्जिया (हैदराबाद)** को **प्रबोध कुमार जैन सुबोध कुमार जैन अहिंसक सिल्क पुरस्कार; श्री रमेश जैन (नई दिल्ली)** को **हरिशचन्द्र रमेशचंद्र जैन धर्म प्रचार प्रसार पुरस्कार;** तथा **श्री यशस्वी शर्मा (दिल्ली)** को **वीरता, खेल, प्रतिभाशाली विद्यार्थी पुरस्कर प्रदान किये गये।**

२६फरवरी को श्रवणबेलगोल में जैन विद्या को समर्पित जर्मन विद्वान **प्रो. डॉ. विलियम बोली (बर्जवर्ग)** को वर्ष २००५ का तथा **प्रो. डॉ.क्लास ब्रूहन (बर्लिन)** को वर्ष २००६ का **ज्ञानभारती प्राकृत अन्तर्राष्ट्रीय अवार्ड** प्रदान करने की घोषणा की गई।

उ. प्र. संस्कृत संस्थान लखनऊ ने **डॉ. रमेश चन्द्र जैन (बिजनौर)** को वर्ष २००६ का **श्रमण पुरस्कार** प्रदान करने की घोषणा की।

उपर्युक्त सभी सम्मानित महानुभावों का उनकी उपलब्धियों के लिये शोधादर्श परिवार अभिनन्दन करता है और उन्हें अपनी शुभकामना अर्पित करता है।

शोक संवेदन

१८ दिसम्बर, २००७ ई. को अजमेर में आशुकवि, निर्भीक पत्रकार, पाक्षिक **'जीत की भेरी'** के प्रकाशक-सम्पादक, समाजसेवी ८३ वर्षीय **श्री जीतमल चौपड़ा** का निधन हो गया।

२२ दिसम्बर को लखनऊ में सुश्राविका **श्रीमती मनोरमा जैन** (धर्मपत्नी स्व. श्री संतोष चन्द जैन, चौक) का स्वर्गवास हो गया।

२३ दिसम्बर को लखनऊ में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., के आजीवन सदस्य और उसकी प्रबंध समिति के सम्माननीय सदस्य समाजसेवी धर्मनिष्ठ श्रावक ८२ वर्षीय **डॉ. नेमिचन्द्र जैन** (शंकरनगर) दिवंगत हो गये।

उसी दिन लखनऊ में धर्मनिष्ठ सरल स्वभावी सुश्रावक ७६ वर्षीय **श्री धनेन्द्र कुमार जैन (धन्नीबाबू)** चारबाग का भी अचानक देहान्त हो गया।

६ जनवरी, २००८ ई. को जयपुर में दुनिया भर में विकलांगों को आत्मनिर्भर बनाने वाले **जयपुर फुट** के जनक डॉ. वी. सी. रॉय पुरस्कार, रैमन मैक्सेसे अवार्ड और पद्मश्री अलंकरण से विभूषित ८० वर्षीय **डॉ. पी. के. सेठी** का निधन हो गया।

७ जनवरी की रात्रि में लखनऊ में समाजरत्न, श्री जैन धर्म प्रवर्द्धनी सभा लखनऊ के संरक्षक, जैन शिक्षण संस्थान लखनऊ के अध्यक्ष समाजसेवी, धर्मनिष्ठ श्रावक ५७ वर्षीय **श्री रज्जूमल जैन** का असामयिक देहावसान हो गया।

१२ फरवरी को नोयडा में प्रबुद्ध श्रावक ६३ वर्षीय **श्री अतरसैन जैन** का निधन हो गया।

१५ फरवरी को जयपुर में जैन साहित्य एवं पुरातत्त्व के प्रख्यात विद्वान एवं कविवर ८६ वर्षीय **पं. अनूप चन्द जैन न्यायतीर्थ** का देहावसान हो गया।

१६ फरवरी को इन्दौर में सुप्रसिद्ध समाजसेवी, बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी, कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ इन्दौर के अध्यक्ष, शोध पत्रिका **'अर्हत् वचन'** के प्रकाशक ८८ वर्षीय काका साहब **श्री देवकुमार सिंह कासलीवाल** नहीं रहे।

शोधादर्श परिवार उपर्युक्त दिवंगत महानुभावों को अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है, उनकी आत्मा की चिर शान्ति और सद्गति के लिये जिनेन्द्रदेव से प्रार्थना करता है तथा शोक संतप्त उनके स्वजनों-परिजनों के प्रति हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

आभार

सर्वश्री संजय, विजय एवं विनय नाहर, ५१४, राजेन्द्रनगर, लखनऊ ने अपने पिताजी-माताजी, श्री लूणकरण नाहर जैन एवं श्रीमती कमला नाहर के पावन परिणय की स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष में **शोधादर्श** को रु. १,०००/- भेंट किये।

डॉ. अनिल कुमार जैन, बी-२६, सूर्यनारायण सोसायटी, साबरमती, अहमदाबाद, ने अपनी सुपुत्री दिवा के विवाहोपलक्ष में **शोधादर्श** को रु. २५०/- भेंट किये।

श्री कैलाश नारायण टण्डन, पाण्डुनगर, कानपुर ने अपनी धर्मपत्नी श्रीम्ती शकुन्तला टण्डन की १५वीं पुण्यतिथि पर उनकी पुण्य स्मृति में **शोधादर्श** को रु. १०१/- भेंट किये।

डॉ. शशि कान्त-रमा कान्त जैन, ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ, ने अपने पिताजी इतिहास-मनीषी (स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के ६७वें जन्म दिवस पर उनकी पुण्य स्मृति में **शोधादर्श** को रु. ५१/- भेंट किये।

श्रीमती आशा जैन, ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ ने अपनी माताजी स्व. प्रकाशवती जैन की पुण्य स्मृति में **शोधादर्श** को रु. २१/- भेंट किये।

श्री निर्मल कुमार जैन सेठी, नई दिल्ली, ने अपने सेठी ट्रस्ट से अपने सुपुत्र चि. पारस एवं सौ. आस्था, सुपुत्री श्री विवेक काला, जयपुर के मंगल परिणय के उपलक्ष में **शोधादर्श** को रु. २१००/- भेंट किये।

पाठकों के पत्र

शोधादर्श-६३ का मुख पृष्ठ नयनाभिराम जलमन्दिर, पावापुरी एवं भीतरी द्वितीय पृष्ठ वर्धमान महावीर स्वामी के चारु चित्र से विलसित अवलोकित कर अत्यन्त आनन्दानुभूति हुई। इस स्तरीय और अत्युपादेय अंक में 'गुरुगुण-कीर्तन' के अन्तर्गत-डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये के प्रेरणाप्रद प्रभावी व्यक्तित्व एवं कृतित्व के अतिरिक्त आपका सुविचारित सामयिक सम्पादकीय -'संगठन का उपाय', 'अकलंकदेव और हरिभद्र का पूर्वापर', 'बड़ी भयंकर भूल है', 'जीवदया और मीट टैक्नोलॉजी', 'तुमसे लागी लगन' के प्रणेता प्रभृति रम्य रचनाएं पढ़कर परम प्रसन्नता हुई। समास्तः आपके सारस्वत सत्प्रयास से **शोधादर्श** की श्रेष्ठ स्तरीय प्रस्तुति सर्वथा सराहनीय है।

- डॉ. कैलाशनाथ द्विवेदी, अजीतमल औरैया

शोधादर्श का ६३वां अंक हस्तगत हुआ। गुरुगुण-कीर्तन के अन्दर डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये का परिचय पढ़कर उनके बहुमुखी व्यक्तित्व का बोध हुआ। सम्पादकीय के अन्तर्गत 'संगठन का उपाय' के अन्तर्गत सम्पादक महोदय ने जो पीड़ा व्यक्त की है, आज के समय की ज्वलंत समस्या बन चुकी है, जिसके निराकरण हेतु कोई भी नेता अग्रणीय नहीं बनना चाहता है। सभी लेख पठनीय-चिन्तनीय हैं।

- ब्र. संदीप सरल, बीना

हर्ष का विषय है कि **'शोधादर्श'** आज भी इसके आद्य सम्पादक (स्व.) ज्योति प्रसाद जी जैन और पूर्व सम्पादक (स्व.) श्री अजित प्रसाद जी जैन द्वारा निर्देशित राह पर आगे बढ़ रहा है। आज परेशानी यह है कि व्यक्ति के जीवन से पारदर्शिता नदारद हो गई है। उसका अभाव ही सारी सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक और पारिवारिक समस्याओं का कारण है। महावीर का दर्शन तो आज भी प्रासंगिक है बशर्ते कोई अपनी संकीर्णताओं का परित्याग करे और वस्तु स्वरूप को समझे।

आपका सोद्देश्य संपादन कारगर बने, यही कामना करता हूँ।

- डॉ. चेतन प्रकाश पाटनी, जोधपुर

शोधादर्श-६३ का तीन बार आद्योपान्त अवलोकन किया। इस अंक में कुछ विशेष पठनीय सामग्री संकलन है। जैसे सभी लोग जैन समाज के सभी वर्ग वाले, "तुमसे लागी लगन, ले लो अपनी शरण", पारस स्तुति लगभग प्रतिदिन पढ़ते हैं

किन्तु उन्हें या अन्य लोगों को पंकज जी के विषय में जानकारी नहीं है जो इस स्तुति के लेखक हैं, कहां के हैं, कब पैदा हुये, कब स्वर्गीय हुये। माता-पिता कौन थे। कौन सी जाति गोत्र के थे। श्री रमा कान्त जैन सम्पादक जी ने सब कुछ दर्शा दिया।

'मेरी भावना' जिसका जन-जन में वाचन होता है, जो पढ़ता है उसे लगता है कि मैं ही कुछ कह रहा हूँ। भावना के लेखक का क्या नाम है, क्या उपाधि है, कब जन्म व स्वर्गारोहण हुआ सामान्य जन को जानकारी नहीं है। आदरणीय जस्टिस एम. एल. जैन सा. ने उनकी भावना को उच्चता प्रदान कर उसे देश-राष्ट्र के लिये धर्मचक्र के समान बताया है।

'नैतिकता की चादर' लेख द्वारा श्री अशोक सहजानन्द जी ने जो वर्तमान की नैतिकता की चादर ओढ़कर समाज में क्यां कर रहे हैं, अच्छा वास्तविक दिग्दर्शन कराया है।

आदरणीय डॉ. शशि कान्त जी जैन ने सामाजिक जागरण हेतु जीवदया और मीट टेक्नोलॉजी पर चिन्तन के लिये प्रेरक बातें लिखीं। समाज को ध्यान देना है।

'आदिपुराण में नारी' डॉ. जैनमती जी जैन की प्रस्तुति सुन्दर है।

'जैन और वैदिक परम्परा में वनस्पति विचार' डॉ. कौमुदी बलदोटा जी ने एक शोध पूर्ण आलेख लिखा जो चिन्तनीय है। जीव कहां-कहां, किन योनियों में कैसे-कैसे उत्पत्ति है। अच्छा विश्लेषण किया है।

शोधादर्श-शोध की ही बातों का, लेखों का प्रकाशन करता है, जो अन्तर ज्ञान का प्रकाश करती हैं।

- पं. सरमनलाल जैन 'दिवाकर' शास्त्री, सरधना

प्राप्त कर शोधादर्श ललाम।
खिल उठा हृद-अम्बुज अभिराम।।
अंक तिरसठवां ज्ञानागार।
विविध भावों का करे प्रसार।।
समाहित लेखों में है शोध।
प्रभावित अतुलित आज ''अबोध''।।

- श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध', लखनऊ

शोधादर्श एक बेहतरीन स्तरीय, ज्ञानवर्धक, ज्ञान मंथन, प्रेरणा, मार्गदर्शक, दिशा सूचक आधुनिक ज्ञान से परिपूर्ण ग्रन्थ है। निःसन्देह प्रकाशन शोधपरक है, अमूल्य है,

अलौकिक है। बेहतरीन मार्गदर्शन के लिये सुधी पाठकों की ओर से आप साधुवाद के पात्र हैं।

– **श्री संतोष जी गुप्ता, अमरावती**

शोधादर्श-६३ मिला। गुरुगुणकीर्तन में डॉ. आदिनाथ नेमीनाथ उपाध्ये जी के बारे में व्यापक जानकारी पढ़कर अच्छा लगा। सदलगा के एक दूसरे संत के कृतित्व से परिचित कराने के लिए आपको बहुत-बहुत धन्यवाद। 'तुमसे लागी लगन' और 'मेरी भावना' जैसी लोक प्रिय रचनाओं को हम लोग खूब पढ़ते रहते हैं। आपने इनके रचनाकारों से भी परिचित करा दिया, अच्छा लगा। धन तेरस को धन्य तेरस या 'ध्यान तेरस' के रूप में मनाने का आह्वान करते हुए डॉ. राजेंद्र बंसल जी ने अत्यन्त उपयोगी सुझाव दिया है जो असरकारी बने, इस हेतु आपसे विनम्र आग्रह है कि कृपया 'दीपोत्सव' पर्व को वास्तविकता से जोड़ते हुए एक ऐसी कार्ययोजना तैयार की जाये जो महावीर के कर्म सिद्धान्त को प्रतिबिम्बित कर सके। अभी हम सभी दीपावली को धनलक्ष्मी का पर्व मानने की भूल से भ्रमित हैं, क्या ही अच्छा हो कि सब वास्तविक मुक्ति रमा से परिचित होने के लिए 'आत्मसाधना' के पथ पर अग्रसर होने के लिए धनतेरस को 'ध्यानतेरस' के रूप में आयोजित कर दीप पर्व को 'आत्म निर्वाण' के रूप में मनाएं।

डॉ. महेंद्रसागर प्रचंडिया जी का आध्यात्मिक गीत प्रेरणास्पद है। 'नैतिकता की चादर' श्री अशोक सहजानंद की आंतरिक व्यथा को उजागर करने वाला लेख है जिसके माध्यम से उन्होंने ज्वलंत मुद्दों को बेहद संजीदगी के साथ उठाया है। नैतिकता के लिए नैतिक शिक्षा के नाम पर अतीत का यशोगान करने के बजाय नैतिक क्रियाकलापों से सिखाना निश्चय ही प्रभावोत्पादक होगा। सिर्फ गुणगान करने से कोई दूसरा महावीर नहीं बनेगा-यह विचारणीय है। धार्मिक प्रभावना वाले कार्यक्रमों के आयोजकों को भी सच्ची धर्म प्रभावना के लिए प्रयास करना आवश्यक है। मुझे श्री सहजानंद जी की बातें और तर्क अच्छे लगे। उन्हें प्रणाम।

– **श्री दामोदर जैन, भोपाल**

शोधादर्श सदैव से मेरी प्रिय पत्रिका रही है। अनेक अनछुए विषयों को अनावृत करने के साथ ही इस पत्रिका ने सामाजिक चेतना के विविध पक्षों व पहलुओं को भी गंभीरतापूर्वक छुआ है।

– **श्री रवीन्द्र मालव, प्रधान सम्पादक 'वीर', दिल्ली**

शोधादर्श का ६३ अंक करगत किया। इससे आपका पुरुषार्थ उजागर हो जाता है। इतनी विरल प्रस्तुति के लिये बहुतशः धन्यवाद !

- डॉ. महेन्द्र सागर प्रचण्डिया, अलीगढ़

शोधादर्श-६३ की प्रति मिली। मिलते ही मैंने उसका अवलोकन किया। निःसन्देह यह आदर्श शोध की पत्रिका है जो 'यथा नाम तथा गुणाः' उक्ति को चरितार्थ करती है। इस अंक में डॉ. शशि कान्त ने 'भगवान महावीर की प्रथम सहस्राब्दी' के माध्यम से न केवल जैन धर्म विषयक जानकारी दी है, अपितु तत्कालीन राजनैतिक-सामाजिक एवं दार्शनिक इतिहास का भी विहंगावलोकन अपनी नपी-तुली भाषा-शैली में प्रस्तुत किया है। वस्तुतः वे इतिहास-मनीषी जो ठहरे।

जस्टिस एम. एल. जैन का आलेख 'मेरी भावना' लोकप्रिय क्यों? सुखद और ज्ञानवर्द्धक लगा, वह इसलिए कि जैन कवियों-विद्वानों ने सर्वधर्म समभाव की परंपरा का पालन ७वीं शती से लेकर २०वीं शती तक निरन्तर किया है और परंपरा के ज्योतिस्तम्भ थे श्री जुगलकिशोर मुख्तार 'युगवीर'। फिर भी कितना दुखद है कि यह समभाव आज जैनेतर धर्मों के बीच तो दूर की बात स्वयं जैन धर्म के विभिन्न आम्नायों के बीच ही नहीं रह गया है।

डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल ने दीपावली के पहले धनाध्यक्ष कुबेर अथवा वैद्य धनवन्तरि के पूजा-दिवस धनतेरस को ध्यानतेरस बताया। यह उनके निजी चिन्तन से सम्बन्धित है अथवा किसी साहित्यिक साक्ष्य पर आधारित है ?

'गुरुगुण-कीर्तन' पत्रिका का श्लाघनीय अंग है। शोध के मानदण्डों पर खरी उतरने योग्य सामग्री से सम्बन्धित 'शोधादर्श' के सुयोग्य सम्पादन हेतु भूरिशः बधाई।

-डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव, लखनऊ

शोधादर्श ६३ अंक अपनी श्रेष्ठ नैतिक मर्यादा सहित सामने है। सम्पादकीय-'संगठन का उपाय' विचारोत्तेजक है। समाज की विद्यमान दशा एवं दिशा का सूचक है। अंध श्रद्धा के कारण महावीर का दर्शन बौना हो गया है। श्रमणाचार्य में लौकिकता के प्रवेश से समाज का संतुलन भी गड़बड़ा गया है। कुछ समय बाद वीतरागी संस्कृति के चिन्ह खोजना भी कठिन हो जावेंगे। भाई रमाकान्त जी की भावाभिव्यक्ति 'त्यागीवृन्द को अभिवंदन' निश्छल हृदय की यथोचित पीड़ा है।

'नैतिकता की चादर' आलेख मार्गदर्शक है। नैतिकता शब्द का लोप हो जाने के कारण जीवन के सभी व्यवहार बदरंग हो गये।

जस्टिस एम.एल. जैन सा. का शोध लेख 'मेरी भावना' लोकप्रिय क्यों ? अच्छा लगा। उन्होंने पं. जुगल किशोर जी के हार्द को सामने रखकर उनके गहन चिंतन और साधना को अभिव्यक्ति दी। बधाई।

डॉ. ज्योति प्रसाद जी का 'अकलंक देव और हरिभद्र का पूर्वापर' आलेख शोधार्थियों के लिये दिशाबोधक है। शोध के नाम पर अब शोध को छोड़कर बहुत कुछ होने लगा है फिर भी शोध-परम्परा तो चालू है ही। डॉ. प्रेमसुमन जी सुधी चिंतक हैं, उन्होंने दिशा निर्देश का पालन किया होगा।

भ. महावीर की प्रथम सहस्राब्दी तथ्यात्मक है और ऐतिहासिक भी। द्वितीय सहस्राब्दी के आलेख की प्रतीक्षा है। डॉ. कौमुदी बलदोटा का आलेख गवेषणापूर्ण है। विज्ञान प्रगति कर रहा है। नई शोध-खोज से तथ्यों की पुष्टि का क्षेत्र व्यापक है। जैन दर्शन ने वनस्पति विज्ञान पर अहिंसा के संदर्भ में विचारणा की है। स्थाई स्तंभ एवं अन्य आलेख ज्ञानवर्धक हैं। डॉ. ए. एन. उपाध्ये का योगदान स्तुत्य है। उनकी जीवन-साधना मार्गदर्शक और प्रेरक है। भाई रमाकान्त जी को साधुवाद!

-डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल, अमलाई

पाया शोधादर्श का तिरसठवां अंक
पढ़ा आदि से अंत तक नाचा मनः मयंक।
गुरुगुण संकीर्तन लिए 'ए. एन. उपाध्ये' का चित्र,
विविध कलापों सें भरा अद्भुत पूर्ण विचित्र,
रमाकांत जी ने किया महापुरुष गुणगान
एक आत्मा का पुनः किया गया सम्मान।
शशिकान्त का लेख तो है रत्नों की खान,
एक एक अक्षर पढ़ा खूब लगा कर ध्यान,
एक सहस्री वर्ष का महावीर का काल।
अति सुन्दर अति विशद है परिचय दिया विशाल।
त्यागी जन का त्याग का धुआंधार प्रचार,
रमाकांत निज व्यंग्य से बखिया रहे उखाड़।

'बड़ी भयंकर भूल है' कविता है अनमोल,
रहे गूंजते कान में 'सारस्वत' जी के बोल,
रोक सके हम भी नहीं अपना भाव प्रभाव,
हमने भी यों लिख दिया अपने मन का भावः
"मानव ने मानवता त्यागी हिंसा को अपना लिया,
और मांस मदिरा में रम कर जीवन दुखद बना लिया,
नहीं जानता छिपे मांस में कहीं भयंकर शूल हैं!
बड़ी भयंकर भूल है।"
बने भगीरथ महावीर प्रभु जन जन का बन गये सहारा,
श्री 'प्रशांत' की इस कविता ने नये भाव को आज उतारा।
'भले न करिये कभी कीर्तन पर न किसी को कभी सतायें'।।
श्री 'प्रचंडिया' ने कविता में मानवता के दर्द जगाये।
'किस लिए मस्तक न झुकता बाप को
व्यक्ति आगे आज बढ़ता जा रहा'
प्रश्न करते डॉ. 'जड़िया' जगत से
प्रकृति से है दूर वह क्यों जा रहा।
और भी स्तंभ सब महान हैं
सभी देते हमें समुचित ज्ञान हैं
सभी के हित पत्रिका आदर्श है
परम प्रियतम हमें शोधादर्श है।

- डॉ. महावीर प्रसाद जैन प्रशांत, लखनऊ

शोधादर्श-६३ पत्रिका पढ़ी। अत्यन्त रोचक तथा जानकारीपूरक पत्रिका पढ़कर मन प्रसन्न हुआ। पत्रिका में जस्टिस एम. एल. जैन का लेख 'मेरी भावना' लोकप्रिय क्यों ? बहुत ही अच्छा लगा। 'मेरी भावना' मैं हमेशा आदर से तथा भक्तिभाव से पढ़ती हूँ। लेकिन 'शोधादर्श' पत्रिका द्वारा उसके यथार्थ भाव से परिचित हुई।

- सौ. सुचेता किरण शहा, सोलापूर

महावीर जयन्ती आई

(तर्ज : मन डोले मेरा तन डोले.......)

मन हरषे, मेरा तन सरषे, मेरे दिल में खुशी की लहर रे,
।।यह महावीर जयन्ती आई।।
चैत्र सुदी तेरस को जन्में, सिद्धार्थ के घर में,
देव देवियाँ मंगल गावें, हर्ष मनावे घर में।
प्रभू के हर्ष मनावे घर में।
त्रिशला हरषे, मन में सरषे, मैं लाई यहां अवतार रे।
।।यह महावीर जयन्ती आई।।
तीस वर्ष की भरी जवानी, में संयम ले धारा,
ममता की इस मोह आग को, समता से दे मारा।
प्रभू ने समता से दे मारा।
तपस्या किनी, करनी किनी, फिर पाया केवलज्ञान रे।
।।यह महावीर जयन्ती आई।।
सत्य अहिंसा नाद, सुनाय, हिंसा दूर भगाई,
अनेकान्त और पंचशील भी, तुमने आन बताई।
अरे ओ तूने आन बताई।
उस वीर प्रभु के चरण कमल में, तूं वन्दन कर ले आज रे।
।।यह महावीर जयन्ती आई।।
आज जयन्ती का दिन आया, हर्ष मनावे आज,
देव तुम्हारे त्याग के सम्मुख, नत मस्तक हैं आज।
अरे ओ नतमस्तक हैं आज।
जयन्तियां आतीं, जयन्तियां जातीं, 'नाहर' शिक्षा ले लो आज रे।
।।यह महावीर जयन्ती आई।।

- श्री लूणकरण नाहर जैन
५१४, राजेन्द्र नगर, लखनऊ-४

(जिनवाणी (जयपुर) अप्रैल, १६५६ से साभार)

आवश्यक सूचना

इस वर्ष का वार्षिक शुल्क ५० रु. (पचास रुपये), यदि अभी नहीं भेजा हो, तो कपया मनीआर्डर द्वारा 'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ. प्र., ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–२२६ ००४', को शीघ्र ही भेजने का अनुग्रह करें। चेक लखनऊ के ही स्वीकार होंगे। एक प्रति का मूल्य २० रु. (बीस रुपये) है। मनीआर्डर भेजने पर उसकी सूचना एक पोस्ट कार्ड पर भी अपने पूरे नाम पते के साथ अवश्य भेजें।

शोधादर्श चातुर्मासिक पत्रिका हैं और सामान्यतया इसके अंक मार्च, जुलाई व नवम्बर में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमंत्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिये और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहिये। यथासंभव लेख ३–४ टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। *लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें। अप्रकाशित लेख–रचना लौटाना कठिन होगा।*

शोधादर्श में समीक्षार्थ पुस्तकों तथा पत्र–पत्रिकाओं की *दो प्रतियां* भेजी जायें।

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु *शोधादर्श* का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक/पत्रिका सम्पादक को ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–२२६ ००४, के पते पर भेजे जायें।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेखों में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भो की प्रामाणिकता के संबंध में लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों /न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

सुधी पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहुँचने की सूचना भी देवें।

— सम्पादक